उत्तराखण्ड के पथ पर

——केदार-बदरी की यात्रा का सजीव वर्णन——

यशपाल जैन

१९५८

[illegible] साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मत्री, सस्ता साहित्य मडल
नई दिल्ली

पहली बार १९५८
मूल्य
दो रुपये

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस,
दिल्ली

प्रकाशकीय

कुछ समय पूर्व लेखक की 'जय अमरनाथ' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी, जिसमें उन्होने काश्मीर, विशेषकर वहा के महान तीर्थ अमरनाथ की यात्रा का वडा ही सजीव एव मनोरजक विवरण उपस्थित किया था। वह पुस्तक इतनी लोकप्रिय हुई कि उसका पहला सस्करण हाथो-हाथ विक गया और हमें दूसरा सस्करण प्रकाशित करना पडा।

हर्ष है कि लेखक की दूसरी यात्रा-पुस्तक पाठको के हाथो में पहुच रही है। इसमें उन्होने हिमालय में स्थित केदारनाथ तथा वदरीनाथ तीर्थों के प्रवास का विशद वर्णन किया है। अमरनाथ की भाति उन्होने यह विवरण भी स्वय यात्रा करके प्रस्तुत किया है, इसलिए वह वडा ही सजीव तथा आकर्षक वन पडा है। पुस्तक पढते-पढते अनेक स्थलो के चित्र पाठको की आखो के आगे घूम जाते है और ऐसा लगने लगता है, मानो पाठक स्वय लेखक के साथ यात्रा कर रहा है।

पुस्तक को अधिकाधिक उपयोगी वनाने के लिए अनेक चित्र, नक्शा तथा चट्टियो आदि की आवश्यक जानकारी दे दी है। यात्रा-विवरण को पढकर तथा चित्रो को देखकर पाठको को पता चलेगा कि इस यात्रा के दौरान में कितने मनोरम स्थल पडते हैं और यह यात्रा कितनी आनद-दायक है।

वदरी-केदार की सारे देश में मानता है और प्रतिवर्ष हजारो यात्री वहा जाते है। हमें विश्वास है कि इन दोनो तीर्थों की यात्रा करनेवालो को इस पुस्तक से अच्छा मार्ग-दर्शन मिलेगा और जो यात्रा नही कर पाये है, वे इसे पढकर घरवैठे यात्रा का रस प्राप्त कर सकेंगे।

—मत्री

दो शब्द

लेखक के लिए निश्चय ही यह बडे संयोग तथा सौभाग्य की बात थी कि सन् १९५४–५५ में दस महीने के भीतर उसे तीन लंबी यात्राएं करने का अवसर मिला। पहली यात्रा थी काश्मीर तथा उसकी गोद में स्थित अमरनाथ की, दूसरी दक्षिण भारत अर्थात् रामेश्वर—कन्याकुमारी तक की और तीसरी उत्तराखण्ड की। इन तीनों यात्राओं में देश के बहुत बडे भाग के उसे दर्शन हुए और अनुभव के साथ-साथ उसे अत्यंत मानसिक स्फूर्ति मिली।

फलत तीनों ही यात्राओं पर उसने विस्तार से लिखा। काश्मीर-प्रवास का वर्णन 'जय अमरनाथ' के नाम से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ। पत्रों में तथा आकाशवाणी के विभिन्न केंद्रों से उसकी उत्साह-वर्द्धक समीक्षाएं हुईं और पाठकों ने भी उसे बहुत पसंद किया।

दक्षिण की यात्रा पर एक लेख-माला 'नवभारत टाइम्स' के दिल्ली तथा बंबई संस्करणों में प्रकाशित हुई। उसके एक दर्जन से अधिक लेखों में अनेक तीर्थों एवं दर्शनीय स्थलों का विस्तृत हाल पाठकों के लिए प्रस्तुत किया गया।

लेकिन उत्तराखण्ड की यात्रा का निराला आनंद था। पच्चीस दिन तक बराबर पर्वतों, वनों, नदियों, प्रपातों तथा देश के विभिन्न भागों के सहस्रों यात्रियों का साथ रहा और उनकी लेखक के हृदय पर इतनी गहरी छाप पडी कि यह यात्रा उसके लिए चिर-स्मरणीय बन गई।

प्रयाग से लौटते ही उसने यात्रा का विवरण लिख डाला, जो लेख-माला के रूप में 'नवभारत टाइम्स' में प्रकाशित हुआ। उसे पढ़कर अनेक पाठकों ने मांग की कि यह सामग्री पुस्तकाकार प्रकाशित होनी चाहिए।

पाठकों के इसी आग्रह के परिणामस्वरूप यह पुस्तक प्रकाशित हो रही

है। समाचार-पत्रो में स्थान की तगी होती है। इस बात को ध्यान में रखकर लेखो में बहुत-से विवरण या तो सक्षिप्त कर दिये गये थे, या बिल्कुल छोड़ दिये गये थे। उन्हे इस पुस्तक में पूरा कर दिया गया है। बहुत-सी ऐसी घटनाए, जो उस समय ध्यान से उतर गई थी, पुस्तक में परिवर्द्धन करते समय अकस्मात याद आगई और उन्हें जोड दिया गया। इस प्रकार प्रयत्न किया गया है कि पुस्तक पाठको के लिए अधिकाधिक उपयोगी बने।

इसमें लेखक को कहातक सफलता मिली है, इसका निर्णय तो पाठक ही कर सकेंगे। यदि उत्तराखण्ड के इन तीर्थों की यात्रा करनेवाले सहस्रो नर-नारियो में से कुछको भी इस पुस्तक से मदद मिली या किसी पाठक को यात्रा करने की प्रेरणा मिली तो लेखक को बडा सतोप होगा और वह अपने परिश्रम को सफल समझेगा।

तीर्थ-यात्रा के लिए लेखक में अधश्रद्धा नही है, जो अधिकाश यात्रियो मे होती है। वह तीर्थों को प्रकृति-देवी का बहुत बडा वरदान मानता है, इसलिए उसका मुख्य उद्देश्य प्रकृति की छटा तथा महिमा के दर्शन करने का रहता है, लेकिन जब-जब उसे यात्रियो की आखो में भगवान के दर्शन होते हैं, उसके बहुत-से सस्कार जागृत हो उठते हैं। यही कारण है कि उसके यात्रा-विवरण में जहा प्राकृतिक सौंदर्य का चित्र रहता है, वहा तीर्थों के धार्मिक स्वरूप की झाकी भी सहज सुलभ हो जाती है। इस प्रकार धर्म-परायण यात्री तथा प्रकृति-प्रेमी पर्यटक दोनो ही पुस्तक को अपने काम की पा सकते हैं।

पुस्तक की सामग्री के बारे में लेखक को कुछ नही कहना। उसकी तैयारी में उसे जिन सुहृद व्यक्तियो का सहयोग मिला है, उनका वह आभार मानता हैं।

७/८ दरियागज,
दिल्ली
१९ मई, १९५८

विषय-सूची

परिशिष्ट

उत्तराखंड के पथ पर

: १ :

हिमालय की देव-भूमि

सैर कर दुनिया की गा़फिल, जिंदगानी फिर कहां !
जिंदगी गर कुछ रही, तो नौजवानी फिर कहां !

पर्वतराज हिमालय का प्राचीन काल से ही बडा महत्व और आकर्षण रहा है। उन दिनों भी, जबकि यातायात की सुविधाएं नही थी, देश-विदेश के अनेक लोग उसकी ओर उत्सुकता से देखते थे और उसके विभिन्न दुर्गम स्थलो की यात्रा करने का प्रयत्न करते थे। पर अब तो स्थिति बदल गई है। आवागमन के साधनो की सुविधाओ के कारण आज तो देश-विदेश के सहस्रो प्रकृति-प्रेमी पर्यटक और धर्मनिष्ठ यात्री हिमालय के शिखरो पर तथा उसकी गोद मे स्थित तीर्थो की यात्रा करते है और उसके प्राकृतिक सौदर्य को देखकर अघाते नही है।

हमारे प्राचीन ग्रथो मे हिमालय को पांच खडो मे विभक्त किया गया है—

"खंडाः पच हिमालयस्य कथिता नेपाल-कूर्माचलौ।
केदारोऽथ जलंधरोऽथ रुचिरः कश्मीर-संज्ञोऽन्तिमः ॥"

वे पाच खड हैं—१ नेपाल २ कूर्माचल ३ केदार ४ जलधर तथा ५ काश्मीर। काली नदी के पूर्व मे नेपाल-खड है, पश्चिम मे कूर्माचल या कुमायू तथा कूर्माचल की पश्चिमी सीमा से यमुना तक केदार-खड है।

हिमालय की पावन भूमि मे अनेक तीर्थ है। उन्हे देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे पूर्व-पुरुषो ने प्रकृति के साथ धर्म को जोडकर बडी दूरदर्शिता का काम किया। यदि विभिन्न स्थानो की रमणीकता के साथ धर्म-कथाए सबद्ध न होती तो न जाने कितने यात्रियो के लिए अलौकिक हिमालय अगम्य और अगोचर रह जाता। यही कथाए है, जो दुर्बल एव अपग व्यक्तियो तक को वहा की यात्रा करने की प्रेरणा देती हैं।

हिमालय मे यो तो बहुत-से दर्शनीय स्थान हैं, लेकिन सबसे अधिक महत्व एव लोकप्रियता प्राप्त हुई है केदारखड को। पौराणिक मतानुसार गढवाल केदारखड के नाम से प्रसिद्ध है। इसका कारण यह माना जाता है कि द्वादश ज्योतिर्लिगो मे से एक लिग केदारनाथ उस भूखड का स्वामी है और इसीसे उस भू-भाग का नाम केदारखड पडा है। उसके विस्तार का उल्लेख निम्नलिखित श्लोक मे आता है

> पंचाशद् योजनायामं त्रिशद् योजनविस्तृतम्,
> श्री गंगाद्वार मर्याद श्वेतान्तं मरवर्णिनी ?
> तमसातटत पूर्वमर्वाग् बौद्धाचल शुभम्,
> केदारमडलाख्यातं भूम्यास्तद् भिन्नकं स्थलम्।
>
> (केदारखड, अध्याय ४०)

अर्थात्—पचास योजन लबा और तीस योजन चौडा, हरि-

द्वार से लेकर हिमालय तक और तमसा नदी से लेकर बौद्धाचल तक का जो भाग है, वह केदारखंड है।

इस केदारखड के अतर्गत बहुत-से तीर्थ विद्यमान है, जिनमे केदारनाथ, बदरीनाथ, गगोत्री, यमुनोत्री आदि की विशेप रूप से मानता है। इन तथा अन्य अनेक तीर्थों के होने तथा व्यास, वसिष्ठ, शंकराचार्य, विवेकानंद, रामतीर्थ आदि मनीषियों की साधना के कारण यह भूमि देवभूमि तथा तपोभूमि के नाम से भी विख्यात है।

: २ :

यात्रा की तैयारी और प्रस्थान

काश्मीर मे अमरनाथ की यात्रा कर आने के बाद हम लोगों ने सोचा था कि प्रतिवर्ष कुछ दिनो के लिए किसी-न-किसी यात्रा की योजना की जाय, किसी पहाडी प्रदेश की हो तो और भी अच्छा। गर्मिया आने पर जब अपने साथियो से चर्चा की तो हमारे मित्र श्री विनायकराव यशवत घोरपडे (केंद्रीय मत्री डाक्टर केसकर के निजी सचिव) की राय हुई कि इस बार बदरी-केदार की यात्रा करनी चाहिए। इस यात्रा का आकर्षण बहुत दिनो से था। हिंदी के साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर वहा हो आये थे और वहा की अनेक रोचक तथा मनोरजक बाते सुनाया करते थे। जब घोरपडेजी ने इस यात्रा का प्रस्ताव रक्खा तो विष्णुभाई ने न केवल उसका अनुमोदन किया, अपितु कहा कि वह भी साथ चलेंगे अमरनाथ के मार्ग की बीहडता का हाल वह मुझसे सुन चुके थे। इसलिए जिक्र आया तो उन्होने बताया कि रास्ता मुश्किल जरूर है, लेकिन अमरनाथ का जैसा नही। 'सस्ता साहित्य मडल' के मंत्री श्री मार्तंडजी के सामने ही ये सब बातें होती थी। अमरनाथ की यात्रा हम लोगो ने साथ-साथ की थी। उनकी भी राय हुई कि इस वर्ष बदरी-केदार ही चला जाय।

विचार पक्का हुआ और जब लोगो को मालूम हुआ तो कई-एक ने टोली मे शामिल होने की इच्छा प्रकट की। संयोग से जैन-विद्वान डाक्टर हीरालाल जैन उन दिनो नागपुर से दिल्ली आये हुए थे। उनसे बात आई तो उन्होने कहा कि वह भी चलेंगे और साथ मे उनकी दो पुत्रिया। दैनिक 'हिदुस्तान' के सह-संपादक श्री शोभालाल गुप्त ने सपत्नीक चलने को कहा। विष्णुभाई के साथ उनके अनुज प्रह्लाद भी चलने की तैयारी करने लगे। श्री मार्तंडजी की पत्नी श्रीमती लक्ष्मीदेवी उपाध्याय की तो बहुत दिनों से इच्छा हो रही थी। वह तैयार हुईं तो उनके सुपुत्र माधव उपाध्याय भी पीछे न रहे। दिल्ली के जैन-समाज-सेवी श्री राज-कृष्ण जैन अपने एक सहयोगी श्री दीपचद के साथ चलने को उद्यत हो गये। इस प्रकार १६ मई, १९५५ को जब हमारी टोली दिल्ली से प्रस्थान करने को तैयार हुई तो उसमें १७ जने थे। उपर्युक्त व्यक्तियो के अतिरिक्त श्री शोभालालजी की पड़ोसिन माताजी 'तीरथ' करने का लोभ सवरण न कर सकने के कारण साथ हो गईं। उधर हीरालालजी के साथ हिदी ग्रथ-रत्नाकर, बंबई के संचालक श्री नाथूरामजी प्रेमी की पुत्रवधू श्रीमती चम्पादेवी तथा हीरालालजी की छोटी पुत्री सुमित्रा के साथ ६ वर्ष का बालक चि० विजय आगया। घोरपड़ेजी थे ही और इन पंक्तियों का लेखक। इस प्रकार टोली काफी बडी हो गई।

यात्रा के बारे में पूरी जानकारी पहले से ही लेकर आवश्यक सामान जुटा लिया था। इस यात्रा मे जानेवालो के लिए हैजे के टीके लगवाना अनिवार्य होता है। जिन्हे सुविधा थी, उन्होने दिल्ली मे ही टीके लगवा लिये। बाहर से जो लोग देर से पहुचे या जो

व्यस्तता के कारण न लगवा पाये, उनके लिए सोचा कि हरिद्वार मे लगवा लेगे। पता लगाने पर मालूम हुआ कि वहापर भी टीके लगने की व्यवस्था है।

दिल्ली से सवेरे की वससे रवाना हुए। यहा से हरिद्वार १६३ मील है। वस अच्छी थी। रास्ता भी साफ-सुथरा था। मेरठ तक तो विशेष गर्मी नही मालूम हुई, लेकिन मुजफ्फरनगर और वाद मे रुडकी तक पहुचते-पहुचते हैरान होगये। अच्छा यह हुआ कि हम लोग आपस मे खूव विनोद करते और हँसते रहे, इससे यात्रा भारी नही मालूम पडी। वैसे भी सफर के शुरू मे स्वाभाविक रूप से अधिक उत्साह रहता है।

: ३ :

उत्तराखंड के द्वार पर

रुडकी से रास्ता नहर-गग के किनारे-किनारे होने के कारण गर्मी कुछ कम होगई। रास्ता भी काफी आकर्षक था। कही पुल पर होकर नहर बहती है तो नीचे नदी। एक जगह नदी को मोड़ कर नहर मे मिल दिया गया है। देखने मे बडा मजा आता है। आगे चलकर हिमालय के दर्शन होने लगे। सारी टोली मौसम की प्रतिकूलता को भूल गई।

हरिद्वार से कुछ पहले ज्वालापुर की चुगी-चौकी आई, जहां और बसो के साथ हमारी बस को काफी देर रोका गया। यह देरी बड़ी अखरी, पर करते क्या! आखिर २॥ बजे, जबकि सूर्य-देवता खूब तेजी दिखा रहे थे, हमारी टोली हरिद्वार पहुंची।

हरिद्वार पहुचकर बिड़ला गैस्ट हाउस मे डेरा डाला। यात्रियो का काफी जमघट होने के कारण स्थान की बडी तंगी थी, लेकिन हम लोगो ने पहले ही से सूचना दे रखी थी, जिससे दो कमरे आसानी से मिल गये। सामान जमाकर, रास्ते की थकान और गर्मी से छुट्टी पाने के लिए सवसे पहले हरि की पौडी पर गगाजी मे स्नान करने गये। जल बडा शीतल था। स्नान करके सारी थकान दूर हो गई। स्नान के बाद भोजन किया। थोडी देर विश्राम करके शाम को घूमने निकल गये।

हरिद्वार का सबसे बडा आकर्षण हरि की पौडी है। वहा यात्री गगाजी मे स्नान और मदिरो मे दर्शन करते है। वस्तुत उत्तर भारत का वह एक प्रसिद्ध तीर्थ है। केदार-बदरी की यात्रा का वह द्वार माना जाता है। लेकिन सच यह है कि उस स्थान की शोभा उसके प्राकृतिक सौदर्य मे है। पृष्ठभूमि मे पर्वत-शृखलाए है और गगा इस शान से बहती है कि देखकर हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। शाम के समय हा खूब चहल-पहल हो जाती है। भजन-कीर्तन होते हैं, कथाए होती है और मदिरो मे आरती के समय अच्छी-खासी भीड हो जाती है। स्थान जितना सुदर है, उतना ही गदा भी है। बीसियो भिखमगे यात्रियो का चलना दूभर कर देते है। भजनीको, कथा-वाचको आदि का इतना कोलाहल होता है कि कोई भी व्यक्ति एकाग्र चित्त से वहा की प्राकृतिक सुषमा की झाकी नही पा सकता। सात पुरियो मे से जिसे एक पुरी होने का गौरव प्राप्त है, उसकी गदगी देखकर मन बडा खिन्न होता है।

अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवतिका:।
पुरी द्वारावती ज्ञेया, सप्तै ते मोक्ष-दायिका॥

मायापुरी हरिद्वार का ही प्राचीन नाम है। सबसे पहले यही पर गगा के दर्शन होते है। कहते है, यह प्रदेश इतना सुरम्य है कि किसी समय मे यहा देवी-देवता निवास करते थे। महाभारत के 'वन-पर्व' मे इसका उल्लेख आता है। यह भी कहा जाता है कि सगर के पुत्रो का उद्धार करने के लिए यही से गगाजी खुले मैदान मे आती हैं। इसलिए इस स्थान को गगा-द्वार भी कहते है।

हरिद्वार को दो प्रकार से सबोधित किया जाता है। हरिद्वार,

अर्थात् विष्णु का द्वार; और हरद्वार, यानी शिव का द्वार। इस प्रकार यह स्थान विष्णु तथा शिव, दोनो के उपासको के लिए वंदनीय है।

बदरी-केदार की यात्रा यही से प्रारंभ होती है। काफी बड़ा नगर है, लबा-चौडा बाजार है। उसमे सब चीजे मिल जाती है। यात्रियो के ठहरने के लिए छोटी-बडी बहुत-सीं धर्मशालाए है। हर साल हजारो यात्री यहा आते है।

यहां का रेलवे स्टेशन मजे का है। उसके निकट ही संत गरीबदास का आश्रम है। आगे चलकर तिराहे पर एक पुराना वट-वृक्ष था, जिसे काटकर उसके स्थान पर मृत्युजय की मूर्ति बनवाई है। इस मूर्ति पर चौबीसों घटे जलधारा गिरती रहती है। बडी सुदर प्रतिमा है वह।

यही से एक सडक कनखल को जाती है। आगे चलकर गीता-भवन है, जिसके पीछे मायादेवी का मंदिर है। ब्रह्मा के पुत्र दक्ष प्रजापति की कन्या सती का ही नाम मायादेवी है। इनकी इस जगह बडी मानता है। इनके पास ही भैरव तथा महादेव के मदिर है।

जैसाकि हम ऊपर कह चुके है, यहां का सबसे रमणीक स्थान है हरि की पौडी। वहा स्नान की अच्छी व्यवस्था है। दर्शन के लिए चार मदिर है—गगा-मदिर, बारहखभा-मदिर, शकराचार्य का मदिर तथा नवग्रह-मदिर।

गगाजी की एक चौडी पर कम गहरी धारा मे, जिसे ब्रह्मकुड कहते है, लोग स्नान करते है। कहा जाता है कि सबसे पहले यही पर ब्रह्मा ने गगा की स्वागत किया था। इसलिए यह ब्रह्मकुड

कहलाता है। दूसरी विशाल धारा मे नावे चलती है। बहुत-से लोग तैरकर भी उसे पार करते है। इन दोनो धाराश्रो के बीच एक विशाल चबूतरा है, जिसपर ऊचा घटाघर बना है। इस चबूतरे पर श्राने के लिए ब्रह्मकुंडवाली धारा को पुल द्वारा पार करना होता है।

हरि की पौडी के पास ही लबा घाट है, जिसपर फूलो का बाजार लगा रहता है। यही से यात्री फूल लेकर गगा मे तथा मदिरो मे चढाते है। शाम को यहा से सामान खरीदकर गगा मे दीप-दान करते हैं। इसके निकट ही गली मे जाकर दक्षिण की श्रोर कुशावर्त घाट है, जिसका निर्माण इदौर की महारानी श्रहिल्याबाई ने कराया था। कहते है, यहीपर एक पैर पर खडे होकर बहुत वर्ष तक दत्तात्रेय ने तप किया था। जब वह ध्यानस्थ थे, गगाजी बहती हुई श्राईं श्रौर उनके कमडल, तथा कुशा श्रादि को बहाकर ले गईं। लेकिन गुरु के तप के प्रभाव से वह श्रागे न जा सकी। दत्तात्रेय ने नेत्र खोले तो उन्हे यह देखकर बडा क्रोध श्राया कि उनका सामान बह गया। उन्होने रोष मे गगा को सुखाना चाहा, लेकिन ब्रह्मा के श्रनुरोध पर वह शात हो गये।

हरि की पौडी से उत्तर को कुछ दूरी पर भीमगोडा नामक स्थान है। कहा जाता है कि ससार से विरक्त होकर जब पाडव उत्तराखड को जाने लगे तो धर्मपुत्र के कहने पर भीम ने यही श्रपना गोड (पैर) गाडकर प्रतिज्ञा की थी कि मैं श्राज से शस्त्र नही उठाऊगा। वहापर एक तालाब है। शिवजी का मदिर तथा भीम की मूर्ति है।

हरिद्वार से कोई डेढ मील पर चडी का मदिर है। यह मदिर

पहाड़ी की चोटी पर वना है। इसे 'सिद्ध-स्थान' कहते है। इसके पास ही दूसरी पहाड़ी पर अजना देवी का मदिर है। इन चोटियों पर खडे होकर हरिद्वार का दृश्य वडा सुंदर दिखाई देता है।

यहा से एक रास्ता दक्षिण दिशा को जाता है। नीचे उतरने पर गौरीशंकर महादेव का मदिर आता है। गौरीशकर से कोई दो फर्लांग पर नीलेश्वर महादेव हैं।

कनखल भी वडा रमणीक स्थान है। किसी जमाने में वह महाराज दक्ष की राजधानी थी। वहा दक्षेश्वर का मदिर है। दक्ष प्रजापति ने शिव ज्योतिर्लिंग की स्थापना यहीपर की थी। शिवरात्रि के अवसर पर इस स्थान पर वडा भारी मेला लगता है। दक्षेश्वर के मदिर के निकट ही सीतला देवी तथा हनुमान के मंदिर है। यहा से आधा-पौन मील पर 'सतीकुड' है, जिसमे शकर-प्रिया सती भस्म हुई थी।

इस स्थान से कुछ दूरी पर सुप्रसिद्ध शिक्षा-केंद्र गुरुकुल कागडी है।

ज्वालापुर भी अच्छी जगह है। यद्यपि धार्मिक दृष्टि से उसका वहुत अधिक महत्व नही है, तथापि पडों के वहुत-से घर होने के कारण वहा अच्छी चहल-पहल रहती है।

हरिद्वार मे अनेक आश्रम तथा महंतो की गद्दिया भी हैं।

हरि की पौडी पर हम लोग खूव घूमे। वही टीके लगवाने की व्यवस्था थी। टोली मे जिनके टीके नही लगे थे, उन्होने लगवाये, फिर वाजार मे आये। पहाड़ी चढाई के लिए लाठिया तथा कुछ दूसरा सामान खरीदना था, सो लिया। तत्पश्चात गैस्ट हाउस लौटकर आगे का कार्यक्रम वनाया। वहुत-से यात्री आगे जाने के

लिए हरिद्वार आये हुए थे। १३ मई को केदार-बदरी के पट खुले थे। पूछने पर मालूम हुआ कि उस समय तक लगभग पाच हजार यात्री आ चुके थे। लबी यात्रा थी। मन मे तरह-तरह की आशकाएं उठती थी, पर अब तो निकल ही पडे थे। रात को बस आदि की व्यवस्था की और सो गये।

अगले दिन बडे तडके उठे। निवृत्त होकर सामान बाधा और आगे की यात्रा के लिए तैयार हो गये। पिछले दिन एक पडा महोदय आ गये थे। वह आग्रह करते थे कि हम उन्हे साथ ले लें। वह हमारी यात्रा की समूची व्यवस्था कर देगे और हमे किसी प्रकार का कष्ट नही होगा, पर हम लोग इसका निर्णय ऋषीकेश जाकर करना चाहते थे।

हरिद्वार से ऋपीकेश तक रेल भी जाती है, लेकिन इतना सामान लेकर स्टेशन जाने मे बडी असुविधा होती। बस का अड्डा पास ही था, इसलिए बस से जाना ही तय किया।

बस के अड्डे पर पहुचे तो बस तैयार थी। सामान लादकर ठीक सवा सात बजे रवाना हुए। रास्ते मे ७ मील पर सत्यनारायण चट्टी आई। वहा सत्यनारायण का मदिर है। कुछ देर रुककर दर्शन करने गये। मदिर की बडी मानता है। उसमे सत्यनारायण तथा लक्ष्मी की मूर्तिया हैं।

कुल मिलाकर १५ मील का रास्ता सवा घटे मे तय करके साढे आठ बजे के करीब ऋषीकेश पहुचे।

: ४ :

ऋषिकेश, लक्ष्मण-झूला, स्वर्गाश्रम

बस के अड्डे के पास ही काली कमलीवाले की धर्मशाला थी। उसमे स्थान के लिए पहले ही से उसके प्रधान प्रबधक श्री लक्ष्मीनारायणजी चतुर्वेदी को लिख दिया था। सामान अड्डे पर छोड़कर उनसे मिलने गये। उन्होने बडी आत्मीयता-पूर्ण प्रसन्नता से दो कमरे हमारे लिए खुलवा दिये। उनमे सामान जमाकर गगा-तट पर पहुचे। कपड़े धोये, नहाये। लौटकर भोजन किया। थोडी देर आराम करके शाम होते-होते घूमने निकल पडे। ऋषीकेश भी बडा ही मनोरम स्थान है। वह गंगाजी के दाहिने तट पर बसा है। वहा के दर्शनीय स्थानो मे राम, भरत तथा हनुमान के मदिर है। कहते है, लका मे रावण-वध करने के पश्चात् राम ने यहीपर प्रायश्चित्त के रूप मे तपस्या की थी। और भी कई मदिर है। अनेक धर्मशालाए हैं।

धर्म-ग्रथो मे उल्लेख है कि यहा पर रैम्य ऋषि ने कठोर तप किया। उससे प्रसन्न होकर भगवान ने दर्शन दिया और कहा, "मै आगे ऋषिकेश के नाम से प्रकट होऊगा। इस स्थान का नाम ऋषिकेशाश्रम होगा। त्रेतायुग में दशरथ-राजकुमार भरत अपने वडे भाईसहित हमारे चतुर्थ वंश से प्रकट होगे। तब हम कलियुग मे भरत के नाम से पुकारे जायगे।"

हिंदी के पत्रकार व बस-सर्विस के अधिकारी श्री भगवानदास मुलतानी सूचना मिलते ही आकर मिल गये थे। शाम को हमे घुमाने के लिए जीप लेकर आगये। जीप मे बैठकर हम लोग 'मुनि की रेती' की ओर रवाना हुए। ज्योही उसके निकट पहुचे, अचानक गाडी का एक टायर फट गया, पर भगवानदासजी ने बड़ी कुशलता से गाडी को सभाल लिया। जबतक उन्होने नया टायर बदला, हम लोग 'मुनी की रेती' पर घूमते रहे। यहा गगा का पाट बडा चौडा है। उस किनारे पर स्वर्गाश्रम की बस्ती दिखाई देती है। नये टायर के लगते ही मुलतानीजी ने आनन-फानन मे हमे लक्ष्मण-झूला पहुचा दिया। बडा सुदर स्थान है लक्ष्मण-झूला भी। गगाजी पर अब तो वहा अर्से से लोहे का मजबूत पुल है, लेकिन किसी जमाने मे वहा रस्सी के छीके थे, जिनकी मदद से यात्री नदी पार करते थे। कितना भयकर होता होगा उनपर नदी पार करना! जरा चूके कि धडाम से पानी मे। तूफानी प्रवाह मे बचने की भला क्या आशा हो सकती होगी? इस प्रकार बहुत-से भोले-भाले धार्मिक व्यक्ति अपने प्राणो से हाथ धो बैठते थे। अब वैसी बात नही है। अब तो लोग पुल पर निरापद घूमते है। पुल लोहे के मोटे तारो पर टिका है, नीचे कोई खभा नही है। बीच मे खडे होकर हिलाने से थोडा हिलता है तो बडा मजा आता है, पर नीचे की ओर देखने मे जान सूखती है। पुल से कुछ फासले पर लक्ष्मण का मदिर है।

लक्ष्मण-झूला से हम लोग स्वर्गाश्रम गये। वहा सबसे पहले काली कमली के सस्थापक की समाधि पर श्रद्धाजलि अर्पित की। इस सस्था ने लोक-सेवा का अद्भुत कार्य किया है। लाखो-करोडो

यात्रियो को यात्रा की सुविधाए दी है। आज भी दे रही है।

'गीता-भवन' वहा का महत्त्वपूर्ण केंद्र है। प्रतिवर्ष गर्मियो के दिनो मे वहा अच्छा सत्सग होता है। गीता-प्रेस के सचालक और 'कल्याण' के सपादक श्री हनुमानप्रसादजी पोद्दार वहा आये हुए थे। हम लोग उनसे मिले, जलपान किया, अनतर 'गीता-भवन' की मोटर-बोट द्वारा नदी के उस पार स्वामी शिवानदजी के आश्रम मे आये।

स्वामीजी का नाम और उनकी प्रवृत्तियो के बारे मे पहले ही से सुन रखा था। जब हम वहा पहुचे, सत्सग चल रहा था। स्वामीजी के दर्शन किये। इतनी उम्र में स्वामीजी के सुदर स्वास्थ्य और आश्रम के वायुमडल को देखकर प्रसन्नता हुई। स्वामीजी ने बडे स्नेह से हमारी यात्रा के लिए मगल-कामना की और हमे कुछ पुस्तके उपहार मे दी।

हमारे एक साथी के कैमरे के फ्लैश के सामान मे गडबड हो गई थी। सो स्वामीजी की आर्ट गैलरी मे गये। उसके सचालक एक साधु थे। उन्होने बडी अच्छी तरह से हमारा स्वागत किया और हमारी जरूरत का बहुत-सा मूल्यवान सामान यह कहकर दे दिया कि आप अपना काम चला ले और यात्रा से जब वापस हो तो उसे लौटा दे। पता तक न लिखवाया। मीलो दूर से सैकडो यात्री वहा आते है। उन्होने क्षण भर को भी न सोचा कि यदि वह सामान उन्हे वापस न लौटाया गया तो वह क्या करेगे? हमे कहा पकडेगे? दूसरो पर उनका इतना विश्वास देखकर हृदय गद्गद् हो गया। मन मे साधु की सराहना करते हुए धर्मशाला मे लौट आये। दस बज रहे थे। अगले दिन का कार्यक्रम बनाकर

जल्दी से सो गये।

शाम को घूमने जाने से पहले ही हमारी टोली मे एक और सज्जन शामिल हो गये थे। वह थे वर्धा के समाजसेवी श्री चिरजीलालजी बडजात्या। साथ चलने के लिए उन्होने वर्धा से जो पत्र लिखा था, वह दिल्ली से रवाना होते समय मिला था। वहा वह पहुचे नही। हमे कल्पना भी न थी कि वह यहा आकर मिलेगे। सबको बडी खुशी हुई।

•

: ५ :

देवप्रयाग और रुद्रप्रयाग

ऋषिकेश से रवाना हुए उस समय सबेरे के सात बजे थे। मौसम बडा सुहावना और प्राकृतिक दृश्य बडे रमणीक थे। अबतक हम लोग समतल भूमि पर चलते आये थे। अब आगे चढाई-ही-चढाई थी। हमारी टोली हर्ष और उत्साह से परिपूर्ण थी। ऋषिकेश से आगे की यात्रा, लारी से या पैदल, नदी के किनारे-किनारे होती है। एक तट पर बस की सड़क है, दूसरे तट पर पैदल का रास्ता है। दोनो तटो के बीच गंगा नदी नाना रूपो मे प्रवाहित होती है। कही उसका रूप इतना उग्र होता है कि देखकर डर लगता है। कही वह बडी मधुर और प्रिय लगती है।

ऋषिकेश से टेहरी होकर धरासू तक ७९ मील लंबी सड़क है, जो गगोत्री-यमुनोत्री को जाती है। इस साल इस सडक के उत्तर-काशी चट्टी तक हो जाने से गंगोत्री-यमुनोत्री की यात्रा करनेवाले यात्रियो को काफी सुविधा हो गई है।

ऋषिकेश से देवप्रयाग ४२ मील है। कुछ यात्री ऋषिकेश से ही पैदल चलना प्रारभ कर देते हैं। वास्तव मे यात्रा का असली आनद तो पैदल चलने मे ही आता है, लेकिन समय और सुविधा की दृष्टि से बहुत-से यात्री रुद्रप्रयाग तक बस से जाते हैं।

रुद्र-प्रयाग से आगे बस नही जाती।

ऋषिकेश से चलने पर मुनि की रेती, स्वर्गाश्रम और लक्ष्मण-झूला जरा-सी देर मे पार हो गये। लक्ष्मण-झूला की ऊचाई ११०० फुट है। वहा हमे कुछ देर रुकना पडा। बसो के आने-जाने के समय निश्चित हैं। उधर से बसे आती है तव इधर से नही जाती। कुछ देर इतजार करने पर रास्ता खुला तो रवाना हुई। आगे के प्राकृतिक दृश्य बडे सुदर है। लक्ष्मण-झूला से कुछ दूर चलने पर आती है गरुड-चट्टी, जहा ऊचाई से गिरता हुआ एक सुदर प्रपात है। उसके जल मे कुछ ऐसे रासायनिक तत्व है, जिनके कारण वहुत समय तक पानी मे पडी रहनेवाली वस्तु पत्थर की-सी हो जाती है। इस प्रपात का वास्तविक आनद तो पैदल चलकर ही लिया जा सकता है।

हम लोग देवप्रयाग की ओर बढे जा रहे थे। लगभग १५ मील तक चढाई रही। अनतर उतार आया। आश्चर्य होता था इस सारे रास्ते को देखकर। अजगर की तरह टेढा-मेढा, ऊचा-नीचा। यह रास्ता कही-कही पर तो इतना डरावना है कि देखकर दिल काप उठता है। चारो ओर पहाड-ही-पहाड, जिनपर कही ऊचे तो कही नीचे हरे-भरे सघन वृक्ष। कही-कही सीढियोनुमा खेत और दूर-पास छितरे हुए छोटे- छोटे गाव। प्रकृति की लीला अद्भुत है, लेकिन मानव की कृत्ति भी कम विलक्षण नही है। पहाडो के बीच से ऐसा मार्ग निकाला है कि देखकर दातो तले उगली दवानी होती है।

आगे चलकर व्यासघाट मिला, जहापर इस यात्रा के प्रथम सगम के दर्शन हुए। नयार नामक नदी, जिसका पुराणो मे

'नवालिका' के नाम से उल्लेख है, यहां गगाजी मे आकर मिलती है। इस छोटे से सगम पर इद्रप्रयाग नाम का तीर्थ है। कहते है, जव देवराज इद्र वृत्रासुर से सग्राम मे परास्त होकर भागे तो यही आकर वह शिवजी की आराधना करने लगे। शिवजी ने प्रसन्न होकर उन्हे वरदान दिया, जिसके फल-स्वरूप उन्होने वृत्रासुर को पराजित किया। तभी से इस स्थान का नाम इद्र-प्रयाग पडा। इस यात्रा मे अनेक प्रयाग आते है। जहां दो नदियां मिलती है, वही प्रयाग कहलाता है। व्यासघाट पर व्यासजी का मदिर है। कहा जाता है, यही पर व्यासजी ने तपस्या की थी। इसीलिए इसका यह नाम पडा। यहां से देवप्रयाग ९ मील है।

रास्ते मे हम लोगो की वस थोडी-थोडी देर के लिए दो-तीन स्थानो पर रुकी। वे पडाव वहुत छोटे-छोटे थे, लेकिन वहां खाने-पीने की चीजे अच्छी मिल जाती है। ४२ मील का रास्ता चार घटे मे तय करके ११ वजे देवप्रयाग पहुंचे।

देवप्रयाग वडा ही मनोरम स्थान है। यहा अलकनंदा और भागीरथी का सगम है। यहा से ये दोनो नदिया अपना-अपना नाम छोडकर 'गगा' वन जाती है। देवप्रयाग का धार्मिक दृष्टि से वडा माहात्म्य है। कहते है, सतयुग मे देवशर्मा नामक किसी मुनि ने यहा तपस्या की थी। भगवान ने प्रसन्न होकर उनको दर्शन दिये और कहा कि यह स्थान तुम्हारे नाम से ही विख्यात होगा। यहा यात्री पितरो का पिंड-तर्पण करते है। काफी वडी वस्ती है। तारघर, डाकघर, डाक-वगला, पुलिस-चौकी, संस्कृत पाठशाला, हायर सैकडरी स्कूल आदि सस्थाएं है। पडों का तो

घर ही समझिये।

हम लोग चाहते थे कि टिकट मिल जाय तो उसी दिन आगे बढ जाय और कीर्तिनगर या श्रीनगर मे रात बितावें, लेकिन वहा पहुचकर भीड-भाड देखी तो लगा कि उस दिन आगे जाना सभव न हो सकेगा। रात को वही ठहरने का निश्चय किया। बाबा काली कमलीवाले की धर्मशाला का पता लगाकर बस्ती के उस छोर पर पहुचे। भागीरथी का पुल पार करके देवप्रयाग मे प्रविष्ट हुए थे। धर्मशाला जाने के लिए अलकनदा का पुल पार करना पडा। धर्मशाला मे सामान रखकर अलकनंदा मे स्नान किया। देवप्रयाग की ऊचाई करीब १७०० फुट होने पर भी गर्मी काफी थी। अलकनदा के शीतल जल मे स्नान करके ताजगी आ गई। भोजन किया और थोडी देर आराम करके शहर मे घूमने चले गये। यहापर तीन पुल है। एक अलकनदा पर, दूसरा भागीरथी पर ये दोनो पुल पैदल पार किये जाते है। आगे चलकर भागीरथी पर एक और पुल है, जिसपर से बसें गुजरती हैं। काफी बडा बाजार है यहा। आबादी लगभग ५००० । मकान ऊचाई-निचाई पर बने होने के कारण बडे अच्छे लगते है। यहा के सबसे बडे आकर्षण-केंद्र दो हैं। एक तो सगम, दूसरा आदिगुरु शकराचार्य द्वारा स्थापित श्री रघुनाथजी का मदिर।

शाम के समय घूमते हुए हम लोग सगम पर पहुचे और वहा खूब अच्छी तरह से स्नान किया। पानी का प्रवाह इतना तेज था कि लोहे की लबी साकल पकडकर गोता लगाया। भागीरथी बडी शात है, पर अलकनदा की कुछ न पूछिये। वह तो मानो अलख जगाती हुई बहती है। सगम के पास ही ब्रह्मकुड

तथा वसिष्ठ-कुड है।

देवप्रयाग से एक रास्ता टिहरी को जाता है। टिहरी यहा से ३४ मील है। यही से गगोत्री-यमुनोत्री की पैदल-यात्रा प्रारभ होती है।

शाम को रघुनाथजी का मदिर देखने गये। जैसा कि हम ऊपर बता चुके है, इस मदिर का निर्माण जगद्गुरु शकराचार्य ने कराया था। यह द्रविड शैली का बना हुआ है। इस तथा आगे मिलनेवाले सभी मंदिरो पर दक्षिण का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इस मंदिर मे रघुनाथजी की ६ फुट की पत्थर की मूर्ति है।

आशा थी कि रात को कुछ ठडक हो जायगी, लेकिन वैसा नही हुआ। एक पतली सूती चादर मे रात कट गई। सवेरे जल्दी उठे और दो साथियो को टिकिट लाने के लिए बुकिग आफिस भेजा। काफी देर वाद लौटकर उन्होने बताया कि सात वजे-वाली वस नही जायँगी, क्योकि शाम को बसे आई ही नही। जल्दी-से-जल्दी सवा ग्यारह बजे की वस से हम लोग जा सकेंगे। बडा वुरा लगा। सात वजे चलने के विचार से वडी जल्दी उठे थे और झटपट सारी तैयारियां कर डाली थी। लेकिन अच्छा हुआ, वोझियो को तय करने का समय मिल गया। उन्होने सारा सामान तोला और वताया कि उसे रुद्रप्रयाग से आगे पैदल कैसे साथ ले जायगे। खाने-पीने की व्यवस्था हुई। इस सवमे समय का उपयोग होगया। ठीक सवा ग्यारह वजे वस मिली। गर्मी के मारे वुरा हाल हो रहा था। सूर्य-देवता अपना प्रताप दिखा रहे थे। अव हमारी वस अलकनंदा के किनारे-किनारे चली। अभी

हमे ४६ मील और चलना था। २४ मील श्रीनगर और वहा से २२ मील रुद्रप्रयाग। इधर का रास्ता वास्तव मे वडा भयकर था। कही-कही तो वहुत ही सकरा और कही-कही पर सडक टूटी हुई। चीटी की चाल से चलकर जव वस उस ऊवड-खावड रास्ते को पार करती थी तो सारे शरीर मे रोमाच हो आता था। ज्यो-ज्यो ऊचाई पर चढते जाते थे, नदी की सतह नीची होती जाती थी, साथ ही भयावनी भी। लेकिन इसमे सदेह नही कि दृश्य एक-से-एक वढकर थे। इन दृश्यो मे इतनी विविधता और वैचित्र्य था कि देखकर मन ऊवता नही था, झूमता था। कही हरियाली इतनी अधिक थी कि पहाड एकदम ढक जाते थे, कही नदी इस प्रकार वल खाती थी कि देखते ही वनती थी, कही ऐसा लगता था, जैसे किसी समतल भूमि पर आ गये हो। कुछ लोग पहाडी यात्रा के अनभ्यस्त थे। इसलिए डर लगता था कि कही किसीकी तवीयत खराव न हो जाय, लेकिन भगवान की कृपा से सव ठीक ही रहे।

एक-डेढ वजे के लगभग कीर्तिनगर पहुचे। कीर्तिनगर काफी वडी जगह है। यहापर अलकनदा का पुल पैदल पार करना पडा। वस का पुल उस समय वन रहा था। लोगो का अदाज था कि सालभर मे वह तैयार हो जायगा और तव यात्रियो को वडा सुभीता हो जायगा। कुछ दिन पहले सुना कि पुल तैयार तो हो गया था, लेकिन उसमे एक दरार हो जाने के कारण काम मे नही आया। अव वह ठीक होगया है और उसपर से वसें आती-जाती हैं। नदी पार करके उस ओर पहुचे। सयोग से श्रीनगर के लिए तत्काल वस मिल गई और तीन मील का रास्ता पार करके

तीन बजे के लगभग श्रीनगर पहुंचे। श्रीनगर बडी बस्ती है। किसी समय सयुक्त गढवाल की वहा राजधानी थी। लबा-चौडा बाजार है। सवत् १९५१ मे अलकनदा मे बडे जोर की बाढ आई, पुरानी बस्ती बह गई। नई बस्ती बसाई गई। यहा से पौडी, कोटद्वार और चमोली तक मोटर का रास्ता गया है। विष्णु, शिव, लक्ष्मी, नारायण तथा कसमर्दिनी के प्राचीन मदिर है। कहते है, रामचद्र ने रावणवध के पाप से मुक्त होने के लिए यही एक हजार कमल रोज चढाकर भगवान शकर की आराधना की थी। तब से कमलेश्वर महादेव का विशाल मदिर भी यहा विद्यमान है।

श्रीनगर मे यात्रियो की भीड बहुत थी। कुछ तो उनके और कुछ बस-अधिकारियो की अव्यवस्था के कारण आगे के लिए बस मिलने में काफी दिक्कत हुई और देर भी लगी। सवा चार बजे चले। इक्कीस मील का रास्ता तय करना अभी बाकी था और हम लोग चाहते थे कि दिन छिपने से पहले ही रुद्रप्रयाग पहुच जाय। वहीं हुआ। इधर का रास्ता उतना बुरा नही था, इसलिए बस मजे की रफ्तार से चली। रास्ते मे जगह-जगह पहाडो पर से धुआ उठता हुआ दिखाई दिया। चीड के पेड भी इधर काफी मिले। यह बस का आखिरी सफर था और अब आगे पैदल चलने की बारी आनेवाली थी, इसलिए हमारी टोली खूब खुश थी।

सात बजे के लगभग रुद्रप्रयाग पहुचे। कई बसों के एक साथ पहुचने के कारण अड्डे पर मेला-सा लग गया। हम लोग झटपट बस से उतरे, बाकियो ने सामान उतारा और संभाला। इस

बीच हम तीन जने ठहरने की व्यवस्था करने के लिए तेजी से आगे बढ । बस का अड्डा नदी के इस पार है, बस्ती उस पार। पुल पार करके उस ओर पहुचे और बाबा काली कमलीवाले की धर्मशाला खोजी । बस्ती के बिलकुल छोर पर मिली । वहा चौकी-दार ने बताया कि धर्मशाला मे पैर रखने को भी जगह नही है। बीसियो यात्री हैरान होकर इधर-उधर घूम रहे थे । जैसे-तैसे चौकीदार ने एक कमरे मे हम लोगो की व्यवस्था की, लेकिन कमरा इतना छोटा था कि हमारी पूरी टोली उसमे नही समा सकती थी । दूसरे स्थान की तलाश की। बडी कठिनाई से रुद्रनाथ-जी के मदिर के ऊपर एक कमरा और मिल गया हम लोगो मे से कुछ काली कमलीवाले की धर्मशाला मे और कुछ मदिरवाले कमरे मे टिके ।

रुद्रप्रयाग की ऊचाई २००० फुट है। यहा भी खासी गर्मी थी। यह स्थान देवप्रयाग से भी अधिक शोभा-युक्त है। मदाकिनी और अलकनदा का सगम है। यहा से एक रास्ता अलकनदा के पुल को पार करके मदाकिनी के किनारे-किनारे उत्तर की ओर केदारनाथ को जाता है, दूसरा अलकनदा के किनारे-किनारे उत्तरपूर्व की ओर बदरीनाथ को।

राहुलजी ने अपनी पुस्तक मे इस स्थान का वर्णन करते हुए यहा के बाबा सच्चिदानद की बडी प्रशसा की है। सामान जमा-कर जब उन विद्वान साधु का पता लगाया तो मालूम हुआ कि विगत आषाढ मे उनका देहात हो गया और अब उनके शिष्य स्वामी कृष्णानदजी अपने गुरु की परपरा को आगे बढा रहे हैं। यहा सस्कृत विद्यालय है, कालिज और अस्पताल है। सगम

के किनारे रुद्रनाथजी का मदिर है। तारघर, टेलीफोन, डाकघर आदि की भी व्यवस्था है। स्वामी कृष्णानदजी मिले। बहुत देर तक बातचीत होती रही। उन्होने बताया कि रुद्रप्रयाग शिक्षा का अच्छा केद्र है। सस्कृत के एक विद्वान की उन्होंने आवश्यकता जताई।

बाजार के निकट २१४ फुट लबा लोहे का पुल है, जिससे अलकनदा को पार किया जाता है। इस नदी का यहा भी बडा तूफानी रूप है, पर मदाकिनी बेचारी पहले जैसी ही शात और गभीर है। सगम पर बड़ा कोलाहल रहता है। पानी का प्रवाह बहुत ही तेज है। देखकर डर लगता है।

हम लोगो ने बाजार मे भोजन किया। पूडिया अचार से खाई। साग मे बेहद मिर्चें थी। भोजन से छुट्टी पाकर अगले दिन की पैदल-यात्रा की तैयारी करके अपने-अपने बिस्तरो पर लेट गये। निश्चय किया कि सवेरे पाच बजे निकल पड़ेगे, जिससे धूप होने से पहले ही अधिक-से-अधिक रास्ता तय कर ले।

: ६ :

पैदल-यात्रा का प्रारंभ

रात को नीद बहुत कम आई। सवेरे जल्दी उठकर चलना चाहते थे, इसलिए बार-बार आख खुल जाती थी कि कही देर न हो जाय। उधर अलकनदा का अनवरत शोर नीद मे खलल डाल रहा था। इन सब विघ्न-बाधाओ के अतिरिक्त थोडी-सी परेशानी बोझियो की ओर से भी हो रही थी। हम लोगो ने सारा सामान देवप्रयाग मे तुलवा लिया था और वही से चार बोझी साथ ले लिये थे। अस्सी रुपये मन के हिसाब से पर्ची भी कटवा ली थी, लेकिन बोझियो का अदाज था कि सामान के जितने वजन की पर्ची कटी है, उससे वह कुछ ज्यादा है। इससे वे अनमने-से दीख रहे थे। उनका मेट वीर बहादुर बडा भला लडका था। असल मे बात यह थी कि बोझी उसके नियत्रण मे नही थे। जो हो, रात को ही एक और बोझी तय कर लिया गया था। विजय के लिए एक कण्डी भी कर ली गई थी, लेकिन सोते समय मेट ने बताया कि कण्डी नही है और वह बालक को पीठ पर कपडे से बाधकर ले जायगा।

सवेरे चार बजे उठे। आकाश मे तारे बिछे थे। चारो ओर अधकार का राज्य था। हम लोग झटपट निवृत्त हुए और दर्जनो सीढिया पार करके जब सगम मे हाथ-मुह धोने पहुचे तो वहा के

दृश्य को देखकर मन सिहर उठा। अधिकाश यात्री उठ गये थे और चलने की जल्दी में थे। रात्रि की नीरवता को भंग करता हुआ उनका कोलाहल अलकनदा और मंदाकिनी के स्वर को और भी प्रखर बना रहा था। अनेक यात्री इतने तड़के संगम में नहा रहे थे। पानी इतना ठडा था कि छूते ही फुरफुरी आती थी। यात्रियो को उसी शीतल जल में स्नान करते देखकर मन में विचार आया कि वास्तव में श्रद्धा बहुत बड़ी चीज है। वही तो दुर्बल तथा क्षीणकाय व्यक्तियों तक को जाने कहां-कहा से खीचकर इस दुर्गम यात्रा पर आने का साहस एवं बल प्रदान करती है।

डेरे पर लौटकर हम लोगों ने अपने साथ ले जानेवाला सामान अलग किया। झोले मे मौके-बेमौके के लिए अमृतधारा आदि औषधियां रखी; मिश्री, लौग, इलायची डाली, एक गिलास और तौलिया रखा; कुछ कागज, डायरी और एक-दो किताबे। झोले के अतिरिक्त पानी की बोतल, कैमरा, लाठी आदि लिये। चप्पलों को छुट्टी दी, केन्वास का जूता पहना। यह सब सामान अलग करके बिस्तर बांध दिये। सारा सामान इकट्ठा करके बोझियों को सौपा और हम लोग जलपान करने गये। अनुभवियो ने वताया था कि इस यात्रा मे चाय का प्रयोग अधिक-से-अधिक करना चाहिए। कच्चा पानी कम पीना चाहिए। एक गिलास चाय ली, कुछ विस्कुट खाये और चलने के लिए सारी टोली तैयार हो गई। ५.२५ पर रवाना हुए। उससे पहले काफी यात्री जा चुके थे।

पूछताछ करने पर मालूम हुआ था कि केदारनाथ की यात्रा

बडी कठिन है, बदरीनाथ की अपेक्षाकृत सरल है। हम लोग दिल्ली से यह सोचकर चले थे कि पहले बदरीनाथ जायगे, और यदि शक्ति बची तो फिर केदारनाथ के दर्शन कर लेगे, लेकिन बाद मे इरादा बदल गया। सोचा कि पहले कठिन यात्रा कर लेनी चाहिए, जिससे सुगम यात्रा के लिए प्रेरणा और साहस बना रहे। इसी निश्चय के अनुसार हम लोगो की टोली केदारनाथ की ओर बढी।

रुद्रप्रयाग पर अलकनदा से विछोह हो गया। देवप्रयाग से वह बराबर साथ रहकर हम लोगो का मनोरजन करती आई थी। अब मदाकिनी की बारी थी। उसीके किनारे-किनारे हमारी टोली आगे बढी। पैदल चलने मे वैसे ही बडा आनद आता है, हडबडाहट नही होती और शाति के साथ कदम आगे बढते जाते है, पर यहा तो मन यह सोचकर और भी प्रसन्न हो रहा था कि हम लोग एक बडी यात्रा करने जा रहे थे।

हरेक के कधे पर एक-एक झोला और पानी की बोतल थी, हाथ मे लाठी। मजे-मजे मे आगे बढे। यात्रियो के कठो से निकले 'केदारनाथ की जय', 'बदरी-विशाल की जय' आदि के उद्घोष से सारा वायुमडल बीच-बीच मे मधुर हो उठता था। हम लोग भी जब-तब उस स्वर मे अपना स्वर मिला देते थे। कभी-कभी भक्ति के गीत सुन पडते थे। आज की यात्रा मे हमे लगभग ११ मील चलकर अगस्त्यमुनि-चट्टी पर पडाव डालना था।

दिन का प्रकाश फूटा तो ऐसा प्रतीत हुआ मानो सामने कोई नई दुनिया है और नये जीवन का उदय हुआ है। आगे-पीछे, इधर-उधर, चारो ओर पर्वतमालाए थी, जिनके बीच पुण्य-

सलिला मंदाकिनी मंथर गति से प्रवाहित हो रही थी। पर्वत की हरियाली मन पर जादू कर रही थी। मौसम बडा सुहावना था। लाठी टेकते-टेकते हम लोग नये लोक मे,अपरिचित पथ पर, आगे बढते जा रहे थे। बस मे यात्रा करते समय बार-बार आशका होती थी कि कही किसीकी तबीयत न बिगड जाय। अब वैसा कोई डर न था। सबकुछ जैसे भगवान को सौपकर हम लोग निश्चित हो गये थे।

आगे बढने पर और बहुत-से यात्री साथ हो गये। सब एक ही पथ के पथिक थे। जरा-सी देर मे कई-एक से परिचय हो गया। उस विशाल यात्री-दल मे विहार, राजस्थान, गुजरात, दक्षिण, बगाल आदि अनेक प्रदेशों के यात्री थे। महिलाए और बच्चे भी थे। बड़े उल्लास के साथ सब बढते जा रहे थे, बढते जा रहे थे।

पांच मील पर पहली चट्टी आई छतौली। बडी सुदर जगह थी वह। हम लोगो ने चलते समय निश्चय किया था कि कोई तेज चले या धीमे, लेकिन छतौली पर सब इकट्ठे हो जायं तब आगे बढे। पहले पहुंचकर हम लोग वहां रुक गये और टोली के शेष लोगों के आने की राह देखने लगे। इन यात्राओ मे चट्टियां बहुत बडा वरदान हैं। चट्टी पडाव को कहते है। वहां ठहरने के लिए कुछ मकान और सामान के लिए चद दुकाने होती है। इधर की यात्रा मे दो-दो, तीन-तीन मील पर ये चट्टिया हैं। यात्री इन चट्टियो मे विश्राम लेते हैं और रात्रिवास करते है। यदि ये चट्टियां न होती तो बिरले ही इन यात्राओ को कर सकते। रुद्रप्रयाग से केदारनाथ ४८ मील है। विना रुके भला इतनी लंबी और

कठिन चढाई की यात्रा कोई कैसे कर सकता है ?

छतौली चट्टी पर हम सब इकट्ठे हुए। कैमरा निकालकर टोली का चित्र खीचा। इस चट्टी पर दूध मिल गया, पिया, कुछ नाश्ता किया और आगे बढे। स्मरण रहे कि इस यात्रा मे कुछ तो पैदल चलने और कुछ जलवायु अच्छी होने के कारण भूख खूब लगती है। किंतु यात्रियो को चाहिए कि वे खाने में असयम न करे, अन्यथा तबीयत खराब हो जाने का डर रहता है। दूसरे, यात्रा मे प्यास बहुत लगती है। अपने पास पानी की व्यवस्था रखनी चाहिए और यदि आवश्यकता पडे तो पी. डब्ल्यू. डी. के नल से पानी लेना चाहिए। यदि वह सुलभ न हो तो झरने के पानी को थोडी देर रखकर और छानकर पीना चाहिए। पानी मे पत्थर के छोटे-छोटे कण होते हैं और वे पेट को नुकसान पहुचाते हैं। हमे यह बात पहले ही से मालूम थी। इसलिए हमारी टोली के प्रत्येक यात्री के कधे पर पानी की एक-एक बोतल रहती थी।

छतौली के बाद एक मील पर तिलवाडा और वहा से दो मील पर रामपुर चट्टी आई। आगे के लिए बस की सडक तैयार हो रही है, इसलिए काम करते बहुत-से मजदूर यहा मिले। वे बडे परिश्रम से चट्टाने तोडकर रास्ता बना रहे थे। कही-कही पर सुरंग लगाकर पत्थर उडा रहे थे। पत्थर मे कइयो का शरीर लहूलुहान हो रहा था। एक का पैर सूजा था। हमें देखकर उसने दवा मागी। विष्णुभाई ने अपना थैला खोलकर उसके पैर पर टिंचर लगाया। आगे चलकर मालूम हुआ कि सुरग से एक मजदूर का सारा शरीर रक्तरजित हो गया। काफी चोट आई

थी। पता नही, बचा होगा या नही। जहां-जहां काम लगा है, वहा समुचित उपचार की व्यवस्था अवश्य रहनी चाहिए।

रामपुर पहुचते-पहुंचते धूप बहुत तेज हो गई, इतनी कि जी हैरान होने लगा। अनभ्यस्त होने के कारण जूते पैरों को काटने और परेशान करने लगे, पर कोई चारा ही न था। पहले सोचा कि रामपुर मे रुककर बाकी के लोगो को आ जाने दे, लेकिन फिर विचार आया कि आखिर अगस्त्यमुनि-चट्टी तो पहुंचना ही है। रुकने से और भी दिक्कत होगी। अत चलते चले। अभी चार मील और चलना था।

मदाकिनी साथ चल रही थी। वह भांति-भाति के दृश्य उपस्थित करके अबतक हम लोगों का मन हरती रही थी, लेकिन इस समय तो धूप के मारे बेहाल हो रहे थे और एक ही बात की धुन थी कि कैसे ही, जल्दी-से-जल्दी पडाव पर पहुंचे और आराम करे।

: ७ :

अगस्त्यमुनि-चट्टी

लगभग ११ बजे अगस्त्यमुनि-चट्टी पहुंचे। जान-मे-जान आई। बाबा काली कमलीवाले की धर्मशाला के एक बराडे मे डेरा डाला। चट्टी काफी बडी है। डाकखाना, कालेज, आदि है। धार्मिक दृष्टि से भी उसका बडा महत्व है। कहते है, अगस्त्यमुनि ने यहा तपस्या की थी। इसलिए इस चट्टी का यह नाम पडा। अगस्त्यमुनि का मदिर है, जिसमे गढवाली राजाओ द्वारा चढाये गये गावो की आमदनी से पास मे ही बसे बेंजी गाव के पुजारी नित्य पूजा करते है। इस मदिर मे अगस्त्यमुनि की दो भुजावाली धातु की मूर्ति है। बहुत सुंदर नही है, लेकिन मदिर के बाहर दाहिनी ओर को हरगौरी की मूर्ति बडी आकर्षक है। पास मे दो मदिर और है—विष्णु और विध्याचल के। निकट ही एक लबा-चौड़ा मैदान है, जिसमे हवाई जहाज का अड्डा बनाने का प्रस्ताव बहुत दिनों से हो रहा है।

टोली के शेष लोग धीरे-धीरे चलकर १२ बजे तक पहुचे। केवल एक सज्जन रह गये। वह थे चिरजीलालजी। शरीर भारी होने के कारण उनके लिए सारी मजिल पैदल चलना कठिन हो गया। विवश होकर उन्हे टट्टू करना पडा।

इस यात्रा मे डाडी, टट्टू, कंडी सब मिल जाते हैं। डाडी

में चार आदमी लगते है और उसमें यात्री बडे आराम से जाते हैं। कडी बेत की कुर्सीनुमा होती है, जिसे बोझी पीठ पर लादकर ले जाते है। यात्रीं इस कुर्सी पर बैठ जाते है और पैर बाहर को लटका देते है। इसमें एक दिक्कत यह रहती है कि जिधर को चलते है, यात्री की उधर पीठ होती है और मुह ठीक विपरीत दिशा मे रहता है। वैसे आराम की चीज है। डाडी सारी यात्रा के लिए लगभग ४००) मे मिलती है। कडी और टट्टू एक रुपया-सवा रुपया मील के हिसाब से मिल जाते है।

टोली के सब लोग इकट्ठे हो गये तो भोजन का डौल जमा। काली कमलीवाले के यहां से बर्तन और सामान लेकर खिचडी बनाई, कुछ रोटियां तैयार की। उसके बाद मंदाकिनी मे जाकर कपड़े धोये, स्नान किया। शरीर फिर ताजा हो गया। लौटकर भोजन किया। कुछ देर सोये। शाम होने से पहले ही बहुत-से यात्री पुन चल पडे, हम लोग तो रात को वही ठहरने और बड़े तड़के निकल पडने का निश्चय कर चुके थे।

पैदल-यात्रा का आज पहला दिन था। थक गये थे, लेकिन आख मूदने पर रास्ते के दृश्य ऐसे चक्कर लगाते थे मानो हम कोई सिनेमा देख रहे हो। कई दृश्य तो वास्तव मे बेजोड थे। हिमालय की हिमाच्छादित चोटी हम लोगो का मार्ग-दर्शन कर रही थी। कई जगह रस्सी के पुल मिले, जिन्हे लोग नदी-पार गाव मे जाने के लिए अस्थायी रूप से तैयार कर लेते है। इन पुलो पर चलने मे यात्रियो का तो दिल कांप उठता है, लेकिन उधर के लोग खटाखट इस तरह पार कर जाते है मानो पक्की सड़क पर चल रहे हो।

शाम को दिन छिपने से पहले घूमने निकले। मदिर देखे, नदी किनारे घूमे और बस्ती मे चक्कर लगाया। एक युवक हमारे साथ हो गया। बडा भला और होशियार था। उसने बताया कि अब तो वहा बस्ती काफी वढ गई है और पढाई के लिए भी अच्छे स्कूल की व्यवस्था हो गई है। वहुत-से लड़के स्कूल मे पढने आ जाते है। पक्की सडक हो जाय और हवाई अड्डा चालू हो जाय तो उस स्थान की और भी उन्नति हो जायगी। कहने को जी हुआ कि तव वह अगस्त्य-मुनि का तीर्थ नही रहेगा, व्यापार का अड्डा बन जायगा, पर कुछ सोचकर चुप रह गये। अव मालूम हुआ कि सडक तैयार हो गई है और वसे उस चट्टी तक आने-जाने लगी है। पता नही, उसके रूप मे क्या परिवर्तन हुआ होगा।

उस युवक ने यह भी वताया कि नदी-पार दो मील पर शिल्ला गाव मे दो विशाल तथा कुछ सामान्य मदिर हैं।

धीरे-धीरे सध्या का अधकार फैलने लगा और बस्ती निस्तब्ध होने लगी। हम लोग अपने निवास-स्थान पर लौटे। दूध पिया, सामूहिक प्रार्थना की और सवेरे जल्दी उठने का सकल्प करके सो गये।

: ८ :

पैर थके, पर रुके नहीं

सवेरे ३॥ बजे उठे। नित्यकर्म से छुट्टी पाई और सामान बांधकर ४.४५ पर रवाना हुए। आज का पडाव जरा लबा था। १३ मील चलकर गुप्तकाशी मे रात बितानी थी। हमे बताया गया था कि आज का रास्ता बडे कसाले का है। आखिरी दो मील की चढाई मे तो प्राण मुह मे आ जाते है। सुनकर एक बार तो कुछ हैरानी हुई, लेकिन बढ़े कदम अब लौटनेवाले नही थे।

२॥ मील पर सौडी चट्टी आई। यहां से ५ मील पर कार्तिकेय का बडा सुदर मदिर है, पर रास्ता थोडा हटकर है।

मदाकिनी ने आगे ऐसे-ऐसे सुंदर दृश्यों का निर्माण किया है कि उनका वर्णन शब्दों मे करना कठिन है। पर्वतों के योग से उसका रूप क्षण-क्षण पर बदलता रहता है। कहीं नव-यौवना की भांति वह उछल-कूद करती है तो कही प्रौढा की भाति धीर-गभीर हो उठती है। यहां की वनश्री तो वहुत ही शोभायुक्त है। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे किसी चितेरे की कुशल तूलिका ने उस अलौकिक जगत की सृष्टि की है और वहां जो दीख पड़ता है, वह पार्थिव जगत की वस्तु नही है। उन दृश्यो को देखने की भूख उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है।

सौड़ी से ३ मील पर चद्रापुरी चट्टी मिली। वड़ा पड़ाव है।

यहा सब आवश्यक वस्तुए मिल जाती है। चंद्रशेखर महादेव और दुर्गा के मदिर है। मदाकिनी और चद्रा नदियो का सगम है।

चद्रापुरी से आगे तीन मील पर पुल से मदाकिनी को पार किया। यह लोहे का खासा लबा पुल है। उसे पार करते समय नीचे देखने मे रोमाच हो आता है। नदी के उस पार भीरी चट्टी है। नदी के इस किनारे-किनारे बस की सडक तैयार हो रही है। इसीलिए मदाकिनी को पार करके उस ओर के तट पर चलना पडता है। भीरी चट्टी नदी के दोनो तटो पर बसी हुई है। यहा की उपत्यकाए गजब की है। सामने पर्वतराज हिमालय के धवल शृ ग, दोनो पार्श्व मे हरे-भरे वृक्षो से सुशोभित पर्वत। प्रकृति यहा वास्तव मे बडी उदार है, लेकिन यथार्थ बात यह है कि प्रकृति की यह उदारता यात्रियो के लिए बडी भारी पडती है। कही-कही तो रास्ता इतना भयावना है कि पैर डगमगाने लगते है। कही-कही बेहद सकरा। यह सब होते हुए भी हजारो श्रद्धालु नर-नारी आगे बढे जाते है। परिचित दुनिया पीछे छूट जाती है, पर उसका मलाल नही होता। नये लोक से नाता जो जुड जाता है। ऐसा जान पडता है, अपने चारो ओर जो कुछ है, उसमे गहरी आत्मीयता है। यही आत्मीयता यात्रियो के दिल को ऊचा उठाती है, एक अनिर्वचनीय उमंग से भर देती है। मदाकिनी मे दिल का कलुष वह जाता है, एक प्रकार की धन्यता अनुभव होती है। भीरी मे डाकघर है। कहते हैं, वहापर भीमसेन का देवालय होने के कारण उसका यह नाम पडा। जो हो, भीमसेन की मूर्ति सुदर नही है। उसके निकट विष्णु की प्राचीन मूर्ति है।

भीरी से ३॥ मील चलने पर मदाकिनी के दाहिने तट पर

कुण्डचट्टी आई। यहा से गुप्तकाशी, जहां हमारी टोली को रात को ठहरना था, कुल २ मील रह गई थी, लेकिन यही चढाई थी, जो खून-पसीना एक कर देनेवाली थी। थककर कुण्डचट्टी कोई १० बजे पहुंचा। आकाश साफ था। सूर्य पूरी तेजी से चमक रहा था। शरीर से पसीना चू रहा था। पहाड़ो की धूप बडी परेशान करनेवाली होती है। थोड़ी देर धूप मे चलने पर यात्री पस्त हो जाता है। इसलिए यात्रियो को चाहिए कि खूब सवेरे उठकर चल दे और जैसे ही धूप मे तेजी आवे, पड़ाव डाल दे और फिर शाम को धूप की तेजी कम होने पर चले।

एक तो धूप तेज, दूसरे, जूते पैर काट रहे थे। दोनों पैरों की उगलियो मे छाले पड़ गये थे। एक-एक कदम भारी हो रहा था। सोचा कि कुण्डचट्टी पर ठहर जाय और शाम को गुप्तकाशी पहुचे लेकिन पंडे के आदमी को गुप्तकाशी रुकने की सूचना पहले ही दे चुके थे और वह आगे निकल गया था। कुण्डचट्टी मे रुककर थोडी देर सुस्ताया, पसीना सुखाया और आगे बढा। टोली के लोग पीछे छूट गये थे।

आगे की खडी चढ़ाई देखकर दिल बैठा जाता था। जूते बहुत हैरान कर रहे थे सो उतार डाले, किंतु धरती इतनी गरम थी कि पैर जलने लगे। पेड़ का रास्ते मे नामोनिशान भी नही था। चढ़ाई शुरू होते ही एक टट्टूवाला पीछे पड़ा। बोला, "बाबूजी, बड़ी कड़ी है चढाई। मेरा कहना मानिये। टट्टू ले लीजिये।" मेरा इरादा था कि जहातक बन पडेगा, सवारी नही लूगा। दूसरे, मुझे लगा कि टट्टूवाला अपनी आमदनी के विचार से आग्रह कर रहा है। टट्टू नही लिया। बाद मे पता

चला कि टट्टूवाले के आग्रह मे कोरा स्वार्थ नही था। चढ़ाई सचमुच वडी भयकर थी। साथ मे कुछ और भी यात्री थे। वे भी बेहाल हो रहे थे। एक बार तो ऐसा जान पडा कि अब आगे नही, बढा जायगा, तभी देखता क्या हू कि तीन-चार वर्ष की एक नन्ही-सी बालिका अपने पिता की उगली पकडे ऊपर चली जा रही है। साहस लौट आया, पैर स्फूर्ति से भर उठे। आगे बढा। सामने पर्वत की हिम-मडित चोटिया दिखाई देती थी, जैसे बुला रही हो। वृक्ष-हीन होने के कारण मार्ग रेतीला था। पैर जलने लगे तो फिर जूते पहन लिये।

कुछ कदम आगे बढने पर एक डाडी आई, जिसमें एक लहू-लुहान स्त्री बेहोश-सी पडी थी। कपडे खून से लथपथ हो रहे थे। पूछने पर मालूम हुआ कि वह छत पर से गिर पड़ी थी। सारी देह फूट गई थी। उसे देखकर डाडीवालो को दया आ गई। वे उसे गुप्तकाशी ले जा रहे थे, जहा चिकित्सा की व्यवस्था थी। स्त्री की दशा देखकर दिल को बडी चोट लगी। यो तो सावधानी से रहने और चलने की सभी जगह जरूरत होती है, लेकिन पहाड़ो पर तो सजग रहना और भी आवश्यक है। जरा से चूकने पर जान सकट मे पड सकती है। बार-बार खयाल होता था कि स्त्री के इतनी चोट लगी है, इतना लहू वहा है, वह क्या बच पायेगी!

ऊपर दूर ऊचाई पर चलते हुए यात्री खिलौने जैसे लगते थे। ओह, वही तो हमे भी पहुचना है! कैसे बेडा पार लगेगा? टोली की महिलाओ का क्या होगा? स्थूलकाय यात्री कैसे इस चढाई को चढ सकेंगे? एक के बाद एक वहुत-से विचार आते गये और पैर धीरे-धीरे आगे बढते गये। सूर्य के प्रकाश मे चमकती हुई धवल

पर्वत-मालाएं मुस्करा रही थी। थके पांवों को प्रेरणा देकर जैसे कह रही हो, "ओ बटोही, अभी तो मंजिल बड़ी दूर है। यों हारोगे तो कैसे काम चलेगा!"

: ६ :

गुप्तकाशी में

जैसे-तैसे रास्ता पार हुआ और १२।। बजे के लगभग गुप्त-काशी पहुचा। कालीकमलीवाले की धर्मशाला का पता लगाकर अदर प्रविष्ट हुआ तो हमारे पडे के आदमी ने बताया कि भीड अधिक होने के कारण जगह बहुत कम है। चौकीदार से आग्रह करने पर एक छोटा-सा कमरा पूरा और आगे आधा बराडा मिला। आधे बराडे मे कुछ और लोग ठहरे हुए थे। उन्होंने बताया कि वे गगोत्री, यमुनोत्री तथा केदारनाथ के दर्शन कर आये है और अब बदरीनाथ जा रहे हैं। बहुत-से सवाल करके उनसे आगे के मार्ग की जानकारी प्राप्त की।

धीरे-धीरे करके टोली के सब लोग आ गये। आखिरी लोग कोई ४।। बजे पहुचे। धूप मे चलने के कारण हीरालालजी की बडी लडकी शाता और चम्पाबहन की तबीयत खराब होगई। शाताबहन तो बहुत घबराने लगी। सयोग से वहा शफाखाना था। डाक्टर को बुलाया। उसने स्टेथसकोप लगाकर दिल की जाच की। तरह-तरह के सवाल किये, जिनसे और घबराहट हो। मैने कहा—"आप बिना बात इतने सवाल कर रहे है। गरमी से इनका पित्त भडक गया है। अभी ठीक हो जायगी।" डाक्टर के जाने पर हम लोगो ने उनके सिर तथा हाथ-पैर की तेल से खूब

मालिश की। थोडी देर मे ठीक हो गई।

अब हम चार हजार फुट की ऊचाई पर थे। गुप्तकाशी काफी बडी चट्टी है और उसकी बडी मानता है। केदारनाथ के पडे यही पर मिलते है। डाकघर, टेलीफोन, औषधालय आदि है। वाजार है, जिसमे सब चीजे मिलती है।

यहा का विशाल शिव-मदिर यात्रियो के लिए विशेष आकर्षण का केंद्र है। उसमे विश्वनाथ का शिव-लिंग है, दूसरे मे पाडवो की मूर्त्तिया है। उसी प्रागण मे अर्द्धनारीश्वर का मंदिर है, जिसकी मूर्त्ति बड़ी सुदर और भावपूर्ण है। यहां के मदिर केदारनाथ के रावल के अधीन है।

केदारखड मे इस स्थान का नाम 'गुह्य वाराणसी,' है। शिव-मदिर के सामने 'मणिकर्णिका' नामक कुड है, जिसमे गोमुखी मे होकर दो जल-धाराए गिरती है। लोगों का कहना है कि ये दोनो गगा-यमुना की धाराएं है, जो सीधी गंगोत्री-यमुनोत्री से आती है।

एक बात बडी अखरी। अबतक के हर पड़ाव पर नदी पास ही होती थी, जिसमे स्नान करने पर थकान बहुत-कुछ दूर हो जाती थी, लेकिन यहा वह काफी फासले पर थी। इसलिए कुड के पानी मे स्नान करना पड़ा। वाहर नल पर कपड़े धोये। बंगालियो की एक टोली भी यात्रा कर रही थी। उसमे कोई सौ स्त्री-पुरुष थे। उनकी सारी व्यवस्था कलकत्ते की कुडू कपनी ने की थी। हम लोगो ने उस टोली का नाम 'कुडू-पार्टी' रख छोड़ा था। जहां-कही वह ठहरती थी, वही दूसरे यात्रियो के लिए स्थान की तंगी हो जाती थी। चीजो के दामों मे अंतर पड़ जाता था, खाने-

पीने की चीजे तो बहुत ही महगी हो जाती थी। वे लोग मजे-मजे मे यात्रा कर रहे थे। जिस पडाव पर ठहरते थे, कढाई चढ जाती थी। पूडियो के साथ-साथ मिठाइया तैयार होती थी। दूसरे यात्री ललचाई ग्राखो से उनकी ग्रोर देखते थे।

भोजन करके बाजार मे घूमने चले गये। किताबो की एक दुकान थी। उसपर से यात्रा-सबधी कुछ पुस्तकें-नक्शे ग्रादि लिये। स्थान बडा मनोरम है। कहते है, पूर्वकाल मे यहीपर ऋषियो ने शकर की ग्राराधना की थी।

रात को यह सोचकर सोये कि सवेरे जल्दी उठेगे। लेकिन रात भर प्रह्लाद को तेज बुखार रहा। बराबर कराहते रहे। सवेरे उठे तो देखा कि ज्वर उतरा नही है। इसलिए तय किया कि सब लोग विश्राम करे ग्रौर दोपहर बाद वहा से चले। डाक्टर को बुलाकर उन्हे दिखाया तो उसने कहा कि चिंता की कोई बात नही है। दवा दे दी। ग्रब परेशानी यह हुई कि प्रह्लाद को दस्त ग्राने लगे। कई बार शौच को गये। ज्वर न टूटा।

गुप्तकाशी मे पण्डो की भरमार है। वे यात्रियो को बहुत ही हेरान करते है। हाथो मे लबी बहिया लेकर वे हर यात्री से उसका नाम ग्रौर ठौर-ठिकाना पूछते है। इतने पीछे पडते है कि लोग तग ग्रा जाते है। हमे भी कई पण्डो ने घेर लिया। उन्हे भगाने की बहुतेरी कोशिश की, लेकिन वे कहा माननेवाले थे। ग्राखिर हम लोगो के नाम-पते लिखकर ही टले।

दोपहर को ग्रचानक बादल घिर ग्राये ग्रौर पानी पडने लगा। डर हुग्रा कि बारिश जम गई तो ग्रागे जाना मुश्किल हो जायगा। पर भगवान की कृपा से थोडी ही देर मे पानी थम गया

ग्रौर स्नान-भोजनादि से छुट्टी पाकर १ बजे के लगभग हमारी टोली रवाना हो गई। कहने की ग्रावश्यकता नही कि कडी चढाई के कारण ग्रधिकाश व्यक्तियो ने टट्टू ले लिये थे ग्रौर ग्रव चूकि केदारनाथ तक चढाई-ही-चढाई थी, इसलिए टट्टुग्रो का स्थायी प्रवध कर लिया गया था। इधर टट्टू वारह ग्राने से लेकर सवा रुपया फी मील के हिसाव से मिल जाते है।

: १० :

फाटा-चट्टी पर

एक मजेदार बात यहा हुई। पिछले दिन सबसे पीछे चिरजीलालजी पहुचे थे। हालाकि वह टट्टू पर थे, फिर भी हैरान होगये थे। टट्टू से उतरने लगे तो एक भगवा वस्त्रधारी साधुने झट आगे बढकर उनकी मदद की। चिरजीलालजी उससे इतने प्रभावित हुए कि बाद मे मुझसे कहने लगे—यशपालजी, उसने मेरी इतनी सच्चे दिल से मदद की कि अपना लडका भी क्या करेगा। मैने कहा, "भाईजी, यह परदेश है। जरा सावधान रहने की जरूरत है।" शाम को भोजन करने बैठे तो देखते हैं कि वह साधु महाराज मौजूद है। हम लोगो के केमरो को देखकर वह कहते थे कि मुझे भी एक केमरा चाहिए। हमे लगा कि कही हमारी टोली का कोई केमरा न उड जाय। अगले दिन के भोजन मे भी वे महाराज अपने-आप शामिल होगये और जब हमारी टोली रवाना हुई तो वह भी साथ-साथ चल पडे। हमने सबको सावधान रहने की हिदायत की, फिर भी रह-रहकर मन उन साधु की ओर जाता था।

डेढ मील चलने पर नालाचट्टी आई। कहा जाता है कि यहा राजा नल ने भगवान की आराधना की थी। यहा भगवती 'ललितादेवी' का मदिर है। एक पत्थर का स्तूप है, जो कि कुमायू-

गढवाल का एकमात्र बौद्ध स्तूप है। मदिर मे कुछ अन्य मूर्त्तिया भी है।

यही से एक रास्ता ऊखीमठ होकर चमोली को जाता है। यहां से चमोली ३० मील, तुगनाथ १७ मील, बदरीनाथ ७० मील, त्रिजुगीनारायण १६ मील और केदारनाथ २३ मील है। केदारनाथ होकर बदरीनाथ जानेवाले यात्रियो को यही लौटकर आना पडता है।

आगे २ मील पर भेत चट्टी या नारायणकोटी आई। वहा १८ प्राचीन मदिर है। उससे आगे १ मील पर व्यूगमल्ला चट्टी आई, जहा लकडी के भाति-भाति के बर्तन बनाये जाते है। यहा एक प्रपात है, जिसके पानी को नियत्रण मे करके मशीने चलाई जाती है। खराद आदि का काम होता है।

व्यूगमल्ला से आगे व्यूगतल्ला तक कोई एक मील तक चढाई-ही-चढाई है। अनतर दो मील पर मैखंडा या झूला चट्टी आती है। यहापर महिषासुर-मर्दिनी का मदिर और हिडोला है। स्कदपुराण में उल्लेख है कि भगवती ने यहीपर महिषासुर को मारा था। स्थान बहुत सुदर है। चारो ओर बड़े ही आकर्षक दृश्य दिखाई देते है। हरी-भरी उपत्यकाए यात्रियो को मोह लेती है। यहा दो खभो पर एक झूला पड़ा है, जिसपर झूलने का बड़ा माहात्म्य है। हम सब बारी-बारी से झूले। कुछ आगे एक देवघर है, जिसके भीतर रुहेलो द्वारा खण्डित की गई दर्जनो मूर्त्तियां है। उनमे मैले पत्थर की शिव और गौरी की मूर्त्तियां बड़ी भव्य है। मैखण्डा से आगे दो मील पर फाटा चट्टी आई। इधर गेहू के खेत खूब मिलते है।

शाम को ५॥ बजे फाटा पहुचे। आगे वढने के लिए अव समय न था। इसलिए रात को वही ठहरने का निश्चय किया।

इस रास्ते मे मगते बहुत मिलते है। छोटे-छोटे लडके-लडकिया हाथ पसारे सामने आते है और रट लगाकर कहते है, "पाई-पैसा, पाई-पैसा।" कोई-कोई सुई-धागा और वटन मागते हैं। इतने पीछे पडते है कि बिना कुछ दिये छुटकारा पाना मुश्किल होता है। गरीबी इधर बहुत है। उतनी ही गदगी भी है।

फाटा पर ठहरने के लिए स्थान अच्छा मिल गया। दो-तीन बडे-बडे कमरे। खाना-पीना हुआ। घूम-घामकर सोये। लेकिन प्रह्लाद का ज्वर बढ गया और रातभर बुखार की तेजी के कारण परेशान रहे। हम लोगो की नीद बीच-बीच मे उचटती रही। सबसे बडी चिता यह थी कि दो दिन से उनका बुखार बराबर चल रहा था। आगे कैसे होगा? अव हम ५२५० फुट की ऊचाई पर आ गये थे और सर्दी शुरू हो गई थी। आगे ठड और भी बढनेवाली थी।

सवेरे उठे तो कडाके का जाडा था। पानी मे हाथ दिया तो फुरफुरी आ गई। गरम कपडे निकालकर पहनने पडे। जल्दी उठे थे कि समय से रवाना हो जायगे, किंतु प्रह्लाद की तबीयत के कारण चिता उपस्थित हो गई। वहा एक छोटी-सी डिस्पेसरी थी, विना डाक्टर की। कम्पाउडर को बुलाया। उन्होने देखकर कहा कि वैसे डरने की कोई बात नही है, लेकिन हो सकता है कि मियादी बुखार हो। उन्होने आगे की सर्दी मे रोगी को न ले जाने की सलाह दी। विष्णुभाई की भी राय हुई कि इस हालत मे

उन्हे आगे ले जाने का खतरा उठाना बुद्धिमानी नही है। अब प्रश्न उठा कि व्यवस्था कैसे हो? प्रह्लाद के साथ कौन रहे? विष्णुभाई ने कहा, "आप लोग जाय। मै एक बार केदारनाथ हो आया हू। इसलिए आप सब मेरी चिता न करे और चले जाय।"

काफी चर्चा के बाद आखिर विष्णुभाई की ही बात रही। ७॥ बजे के लगभग जब उन दोनो को छोडकर चले तो मन बडा दु खी हो रहा था। अबतक की यात्रा कितने आनद से हुई थी। अकस्मात व्यवधान पड गया। सारी टोली दुखित हुई, पर और कोई चारा भी तो न था।

एक टट्टू और एक बोझी उनके पास रह गया, ताकि अगर तबीयत ठीक हो जाय तो वे आ जाय और केदारनाथ मे हमे मिल जाय। मौजूदा हालत को देखते यह मुश्किल लगता था, फिर भी आशा तो बनी ही रही।

: ११ :

विचित्र दुनिया

चलते-चलते निश्चय किया कि ५ मील चलकर रामपुर चट्टी पर रुका जाय और वहा भोजन-विश्राम करके दोपहर बाद आगे बढा जाय। धूप निकल आई थी, लेकिन सर्दी प्रारभ हो जाने के कारण यात्रा भारी नही पडी। बहुत-से यात्री आ-जा रहे थे।

फाटाचट्टी से आगे का मार्ग बडा सुदर है। ज्यो-ज्यों ऊचाई पर चढते जाते है, हरी-भरी उपत्यकाए आगे-पीछे दीख पडती है। ऊचे-ऊचे सघन वृक्षो के कारण पर्वतमालाए इतनी सुहावनी लगती कि देखते-देखते जी नही अघाता। कही-कही छोटे-छोटे गाव उस वनश्री के बीच ऐसे जान पडते है, मानो प्रकृति की अगूठी मे नग जडे हो। यहा के ग्रामवासियो की गुजर-बसर कुछ तो खेती से और कुछ बजी-व्यापार से होती है।

यहा की सारी भूमि को धार्मिक रूप देकर यात्रियो से पैसे वसूल करने के लिए जगह-जगह पर लोगो ने विभिन्न देवी-देवताओ की मूर्त्तिया रख छोडी है। कही गणेश की मूर्त्ति है तो कही गरुड की, कही किसीकी, तो कही किसीकी। मूर्त्तिके पास एक आदमी बैठा रहता है। सामने थाली रहती है, जिसमे कुछ पैसे पडे रहते है। यात्रियो के देखते ही वह आदमी कोई कथा सुनाकर उस स्थान और उस मूर्त्ति का माहात्म्य इस ढग से समझाता है

कि बहुत-से भोले-भाले यात्री चक्कर मे आ जाते है। इस प्रकार कमाई के अनेक केद्र इस सारी यात्रा मे मिलते है। हा, एक बात है। यदि इन लोगो से सुनकर सारी कहानिया लिखी जाय तो एक बडा रोचक और मनोरजक ग्रथ तैयार हो सकता है।

लाडनू के एक वैद्यजी से उत्तरकाशी के उधर ही से परिचय हो गया था। अब मिले तो उनका चेहरा बडा उतरा हुआ दिखाई दिया। पूछने पर मालूम हुआ कि गुप्तकाशी मे कोई उनका ट्रक उठा ले गया। उसमे उनकी पत्नी के कुछ गहने और गर्म कपडे थे। रात को ट्रक को सिरहाने रखकर सोये। सवेरे उठे तो देखते क्या है कि ट्रक गायब। बहुतेरा सर पटका, पर पता कहा चलनेवाला था। उन्हे गहनो के जाने का उतना मलाल न था, जितना कि गर्म कपडो का। उनकी पाच-छ साल की लडकी बिना गर्म कपडो के आगे की सर्दी को कैसे बर्दाश्त करेगी? इधर के लोग गरीब होते हुए भी बडे ईमानदार है। यह काम उनका तो हो नही सकता था। सभवत. साधु-वेप मे कोई चोर पीछे लग गया होगा और मौका देखकर ट्रक पर हाथ साफ कर दिया होगा। मैने उन्हे समझाया कि वह पडे को पकड़े, पर उनकी बातचीत से मालूम हुआ कि इस मामले मे वह पहले ही काफी कहा-सुनी कर चुके है।

सवा नौ बजे रामपुर चट्टी पहुचे। यह चट्टी बड़ा पड़ाव है। खाने-पीने के साथ-साथ जरूरत की अधिकाश वस्तुए मिल जाती है। थोडी देर रुककर भोजन और आराम किया, अनतर आगे बढे। हम सबके पैरो मे छाले पड़ गये थे, लेकिन चलते-चलते पैर अब बहुत-कुछ आदी हो गये थे। दूसरे, केदारनाथ पहुंचने की उमग इतनी थी कि पैर वह सब खुशी-खुशी सह रहे थे।

आज के रास्ते मे चढाई अधिक थी। कही समतल भूमि आ जाती थी या चढाई अधिक नही होती थी तो वडा चैन मिलता था, लेकिन ज्योही देखते थे कि ऊचाई पर यात्री खिलौने जैसे दीख रहे है, और हमे भी वही पहुचना है तो एकदम भय-मिश्रित रोमाच हो आता था। कैसी विचित्र दुनिया है वह ! न वहा कोई धनी है, न रक, न कोई बडा है, न छोटा, न कोई नीच है, न कोई ऊच, एक बडे कुटुब के आत्मीयजनो की भाति प्रेम से हिल-मिलकर सब चले जा रहे है, चले जा रहे है। थोडी देर की जान-पहचान में ही ऐसा लगता है, मानो वर्षों का परिचय हो।

रास्ते मे बहुत-सी बकरिया और भेंडे पहाड के ढलानो पर चरती हुई मिली। उनमे से कुछ तो ऐसी खतरनाक जगहो पर चर रही थी कि देखकर डर लगता था। जरा पैर उधर हुआ कि धडाम से नीचे। चरवाहे ने बताया कि ऐसी दुर्घटनाए बहुत कम होती है। पैर सधे होने के कारण भेड-बकरिया बडी तेजी से मन-चाहे स्थान पर चरकर सही-सलामत ऊपर आ जाती है।

अब हम लोग काफी ऊचाई पर पहुच गये थे। मनोरजन के लिए हममे से किसीने एक बडा-सा पत्थर सरकाकर नीचे पटक दिया, यह देखने के लिए कि उसका क्या हश्र होता है। इसपर केदारबाबा के दर्शन करके लौटती हुई एक बहन बोली—"यह क्या करते हो भैया ! लोग मेहनत करके रास्ते की पाड बाधते हैं, और तुम उसमे से पत्थर निकालकर यो फेकते हो ?" सुनकर बडी शरम आई। लेकिन अब क्या हो सकता था ! पत्थर खड-खड होता हुआ बहुत नीचे पहुच चुका था और बिखरकर एक जरा-सा टुकडा-मात्र रह गया था।

: १२ :

गौरीकुंड में

आखिरी चढाई भारी पडी। एक तो दिन मे काफी चल चुके थे, दूसरे दिन छिपनेवाला था। रात को गौरीकुड ठहरने का इरादा हुआ। वहा पहुचने से पहले सिरकटे गणेश के पास रुके। पुजारी ने वताया कि यहा पार्वती ने रखवाली के लिए गणेश को विठा दिया था। शिवजी आये तो गणेश ने उन्हे रोका। इसपर गुस्सा होकर शिवजी ने उनका सिर उडा दिया। जव पार्वती को यह मालूम हुआ तो वह वहुत रोई-धोई। तव शिवजी ने हाल ही मे पैदा हुए हाथी के एक वच्चे का सिर काटकर लगा दिया। उस समय से गणेश गजानन वन गये।

साढे पाच वजे गौरीकुड पहुचे। आज की रात वही वितानी थी। वावा काली कमलीवाले की धर्मशाला की ढूढते हुए वहा पहुचे। धर्मशाला खचाखच भरी हुई थी। वहुत-से यात्री स्थान के लिए चितित होकर इधर-उधर भटक रहे थे। हम लोगो को जैसे-तैसे उसीमे एक कमरा मिला। डेरा डाला। यहां सर्दी काफी थी, लेकिन जव देखा कि कुछ ही कदम पर एक तप्तकुड है तो तवीयत खुश हो गई। कुड का पानी इतना गर्म था कि एक साथ उसमे कोई हाथ या पैर नही डाल सकता था। गोमुखी मे से जहा जलधारा निकलकर कुड मे गिर रही थी, वहां तो पानी में

से भाप उठ रही थी। लगा, कोई बहुत बडी नियामत हाथ लग गई।

सामान आने मे देर थी, पर हम लोगों को अब सब्र कहा था! जाघिया पहनकर कुड मे स्नान करने पहुचे। ज्योही पानी मे पैर डाला कि झट बाहर खीच लिया। बेहद गर्म था। प्रकृति की माया कितनी विचित्र है। एक ओर तो इतना गर्म पानी कि हाथ डालो तो जल जाय। दूसरी ओर कुछ ही कदम पर मदाकिनी की हिम जैसी शीतल जलधारा, जिसके स्पर्श से सारा शरीर सिहर उठे! प्रकृति के रहस्य को कौन जान सकता है।

केदारनाथ की यात्रा मे गौरीकुड अतिम बडा पडाव है। बहुत आकर्षक स्थान है। ऊचाई ६००० फुट। बस्ती काफी घेरे मे फैली हुई है। उसमे घुसते ही एक और कुड आता है, जिसका पानी कुछ-कुछ पीला और गुनगुना है। कहते है, यही कुड है, जिसमे पार्वती स्नान किया करती थी। पडे ने बताया कि इस कुड के जल का रग प्राय. बदलता रहता है। इसमे सचाई हो या न हो, लेकिन आश्चर्य इस बात का है कि इस कुड का पानी रगीन है, जबकि कुछ ही गज पर तप्तकुड का पानी सामान्य वर्ण का है। बस्ती के बीच मे गौरी का छोटा-सा मदिर है, जिसमें प्रात काल पूजन और सायकाल आरती होती है। आरती में अंबे-गौरी और गणेश-वदना के भजनों के रिकार्ड बजाये जाते है।

रात को भोजन की अच्छी व्यवस्था होगई। दुकानदार ने साग-पूडी बनाकर दे दिये। खा-पीकर सोने से पहले गौरी के मदिर में गये। आरती के समय काफी लोग इकट्ठे हो गये थे।

: १३ :

आखिरी मंजिल

रात को स्थान की तगी 'और कोलाहल के कारण नीद नही आई। बडे तडके उठे, निवृत्त हुए, तप्तकुड मे स्नान किया और ५.५५ पर टोली ने कूच कर दिया। यहा हमे बताया गया था कि आगे सात मील की चढाई बडी विकट है। उसमे ५,००० फुट से भी अधिक चढना पडता है। पर लक्ष्य के निकट पहुंचने के उल्लास ने पैरो को बडी गति प्रदान कर दी थी। दर्जनो यात्री जा रहे थे। हम लोगो ने भी भगवान् का नाम लेकर यात्रा प्रारभ कर दी।

चढाई वास्तव मे बडी कठिन थी। थोडी-थोडी दूर पर सास लेने के लिए रुकना पडता था। पर जितना हमे डराया गया था, चढाई उतनी भयकर नही निकली। चार मील चढने पर रामबाडा चट्टी आई। यहा के दृश्य बडे ही मनोरम है। उन्हे देखकर नीरस-से-नीरस व्यक्ति का भी हृदय उछलने लगता है। सामने सूर्य के प्रकाश मे चमकते धवल गिरि-शिखर और इधर-उधर तथा पीछे हरे परिधान मे आवृत्त पर्वत-मालाए—कोई ऊची, कोई नीची। उनके मध्य चपलता से बहती मदाकिनी की धारा! कही-कही पर पर्वतों के वक्ष पर अठखेलिया करते प्रपात, ऊपर निर्मल आकाश! प्रकृति के इस रूप को देखकर हम लोगो के मस्तक

श्रद्धा से स्वत ही झुक गये।

अब तो कुल तीन मील की बात रह गई थी। रामबाडा इस यात्रा की आखिरी चट्टी है। वहा कुछ देर रुके। एक दूकान पर नाश्ता किया, दूध पिया। दूकानदार बडा दिलचस्प आदमी निकला। बूढा था और सस्कृत-मिश्रित हिंदी बोलता था। मैंने कहा, "बाबा, तुम तो बडी अच्छी हिंदी बोलते हो।"

वह बोला, "आप समझते क्या हो ? मै 'अनाशक्ति-योग' का बराबर पाठ करता हू।"

'अनासक्ति' की जगह 'अनाशक्ति' उसने इस ढग से कहा कि मुझे हंसी आगई। फिर मैंने छेडते हुए पूछा, "बाबा, गाधीजी को जानते हो ?"

"क्यो नही ? उन महात्मा को कौन नही जानता ?" वह बोले।

मैने फिर पूछा, "अच्छा और किस-किस नेता को जानते हो ?"

उसके बूढे चेहरे पर मुस्कराहट खिल उठी। गर्व के साथ बोला, "मैं सब बडे-बडे आदमियो को जानता हू। राजेंद्रप्रसाद हमारे राष्ट्रपति है, जवाहरलाल नेहरू प्रधान मत्री। हैं न ?"

उसकी इस जानकारी पर हम सबको थोडा आश्चर्य हुआ। शहर से कोसो दूर और राजनीति से कोई सरोकार नही ! फिर भी उसकी इतनी दिलचस्पी !

उससे और बाते करने की इच्छा हुई, लेकिन देर हो रही थी। आगे बढे। रामबाडा से फिर दृश्य बदले ! इस यात्रा मे पहली बार अब बर्फ पर चलना पडा। बडा मजा आया। चलते-

चलते लाठी से बर्फतोडी, लड्डू वनाये और बच्चो'की तरह खेले। लोगों का कहना था कि यहा की हवा ऐसी है कि वहुतो को मूर्च्छा आ जाती है। यह बात सोलहो आने गलत निकली। हममे से एक भी व्यक्ति मूर्च्छित नही हुआ और न हमने और किसीको मूर्च्छित होते देखा।

अब हरियाली धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। अत मे हम ऐसी जगह पहुचे, जहा पर्वत एकदम वृक्ष-विहीन थे। उनकी चोटिया बर्फ से ढकी हुई थी। जमे हुए प्रपातो की धाराए उनपर ऐसी दिखाई देती थी, जैसे किसीने खडिया से लाइने खीच दी हो। भाति-भाति की हिमाकृतिया वहा दीख पडती थी।

हम लोगो के पैर कुछ ही दूरी पर धुधली-सी दीख पडनेवाली पुरी की ओर तेजी से बढ रहे थे। वही तो था केदारबाबा का धाम, जिसके दर्शन के लिए हम लोगो ने इतनी साधना की थी। वास्तव मे उनके दर्शन से हृदय मे वडी गुदगुदी अनुभव हुई। हमारे उल्लास का साथ देते हुए जब मेघखडो ने जलकणो के रूप मे पुष्पवर्षा प्रारभ की तो हम लोगो को और भी आनद आया। साथ ही कुछ चिता भी हुई। अभी हमे कुछ गज का फासला और तय करना था। सामान काफी पीछे था। उसके भीग जाने का डर था। हमे बताया गया कि दस-ग्यारह बजे से वहा प्राय वादल घिरने लगते है और शाम तक घिरे रहते है। वडी विचित्र वात थी! चले थे तव आकाश एकदम साफ था। रास्तेभर वैसा ही रहा। लेकिन यहा पहुचते-पहुचते बादल एक-दूसरे से आख-मिचौनी करते हुए दीख पडने लगे। जो हो, उस समय जो दृश्य था, उसकी अलौकिकता को अनुभव किया जा सकता है, शब्द

व्यक्त नही कर सकते ।

आखिर देवदेखनी स्थान पर पहुचे, जहा से केदारनाथ का मैदान प्रारभ होता है। फिर मदाकिनी के पुल को पार करके पुरी में प्रविष्ट हुए। हमारे पडे के आदमी ने वहा पहुचकर पहले ही से स्थान की व्यवस्था कर रक्खी थी। सीधे वही पहुंचे। सर्दी इतनी कडाके की थी कि शरीर अकडा जा रहा था। अब हम ११७५० फुट की ऊचाई पर थे। तीन ओर हिममडित गिरि-श्रृखलाए, चौथी ओर दूर-दिगत मे हरी चादर ओढे उपत्यका। जीवन की वह निस्सदेह अविस्मरणीय घडी थी।

: १४ :

जय केदारनाथ !

केदारनाथ पुरी मे ठहरने की व्यवस्था मदिर-कमेटी की ओर से या काली कमलीवाले की धर्मशाला मे होनी थी, लेकिन जैसाकि पहले कह चुके है, पडे के आदमी ने जल्दी पहुचकर और ही कही कर दी। मकान खूब बडा और अच्छा था। उसके बराडे मे खडे होकर जब हमने इधर-उधर निगाह डाली तो सारा शरीर पुलकित हो उठा। धुनी हुई रुई के छोटे-छोटे फोहो की भाति बर्फ गिर रही थी, आकाश मेघाच्छन्न। जान पडता था, मध्याह्न मे ही सध्यारानी का आगमन हो रहा है। कुछ-कुछ अधेरा-सा छा गया था। उस वायुमण्डल मे हिम का मुकट पहने श्वेत गिरि-शृग दिल मे गुदगुदी पैदा करते थे। वहा का प्राकृतिक सौदर्य कुछ और ही था।

जैसाकि हम पहले लिख चुके है, पौराणिक मतानुसार गढवाल 'केदारखण्ड' के नाम से विख्यात है। चूकि द्वादश-ज्योतिर्लिगो मे से केदारनाथ इस प्रदेश का अधिपति माना जाता है, इसलिए इस भूखड का नाम केदारखंड पडा। कहते है, इस पुण्यभूमि मे सबसे पहले महात्मा उपमन्यु ने शिवजी की आराधना की थी। द्वापर मे जब पाडव राजपाट छोड़कर हिमालय मे केदार-नाथ के दर्शन के लिए गये तो शिवजी ने उन्हे गोत्रहत्या का दोषी

जानकर उनसे बचने के लिए महिष (भैसे) का रूप धारण कर पृथ्वी मे प्रवेश करना चाहा, पर जैसे ही उनका अग्र भाग भूमि के अदर घुसा कि भीमसेन ने उन्हे पकड लिया। इसपर शिवजी ने प्रसन्न होकर उन्हे दर्शन दिये और उनका गोत्रहत्या का पाप दूर हो गया। शिवजी का जो अग्र भाग भूमि के अदर प्रविष्ट हो गया था, वह नैपाल मे प्रकट हुआ और 'पशुपतिनाथ' के नाम से आज पूजा जाता है। शेष चार भाग उत्तरखड के चार अन्य स्थानो मे पूजे जाते है—बाहे तुगनाथ मे, मुख रुद्रनाथ मे, नाभि महमहेश्वर मे और जटा कल्पेश्वर मे। यही 'पचकेदार' कहे जाते हैं।

ऊचाई अधिक होने के कारण सर्दी इतनी अधिक थी कि हम लोग ठिठुरे जा रहे थे। हमने बराडे मे आग तेज की और उसके चारो ओर बैठकर हाथ सेकने लगे। जैसे ही निगाह बाहर जाती थी, वर्फ गिरती दिखाई देती थी। थोडी देर मे बोझी सामान लेकर आ गये। वे बहुत थक गये थे। बडी बहादुरी से उन्होने यह मजिल पूरी की।

सामान खोलकर गरम कपडे लादे। हीरालालजी से उस आकर्षक दृश्य का आनद लेने का लोभ सवरण न हुआ। वह छाता लेकर बाहर जाने को उद्यत हुए। हम लोग भी साथ हो लिये। महिलाओ को छोडकर सब बाहर घूमने निकल पडे। बर्फ बराबर पड रही थी और गर्म कपडो से लदे होने पर भी कपकपी आती थी। मदिर के पट १ बजे बद हो जाते है। हम लोग सबसे पहले मदिर मे पहुचे। अदर स्थानाभाव के कारण थोडे-थोडे लोग ही जा सकते थे। हमे नगे पैर कुछ देर प्रतीक्षा करनी पडी। फर्श इतना ठडा था कि पैरो मे दर्द होने लगा। मदिर

के बाहर चारो ओर काफी बड़ा चबूतरा है। मुख्यद्वार के सामने नदी की विशाल मूर्त्ति है। बारी आने पर हम लोग अंदर पहुंचे।

सभामडप मे द्रौपदी-सहित पाचो पाडवो की मूर्त्तिया है, और वे दीवार के सहारे चारो ओर प्रतिष्ठित है। बीच मे फिर नदी की मूर्त्ति है। इसके पश्चात् मुख्य मदिर मे प्रवेश करते है। चौखट पर अनेक छोटी-छोटी मूर्त्तिया है। उनमे कई तो दिगबर हैं और पद्मासनस्थ मुद्रा मे है। अदर गर्भ-गृह मे केदारनाथ का लिंग है। यह लिग अन्य शिवलिगो की भाति नही है। वह त्रिकोणाकार एक बृहद् शिला है। कहा जाता है कि इसी शिला की पांडवों ने पूजा की थी और उसपर घी लेपकर उससे हृदय का स्पर्श किया था। आज भी पूजा की यही पद्धति प्रचलित है। पूजा की सामग्री के साथ लोग घी लाते है और उसका शिला पर मर्दन करते है। श्रावण के महीने मे लोग कमल चढाने का विशेष महत्व मानते है।

अदर घी के बहुत-से दिये जल रहे थे, जिनके कारण वहा का वायुमडल बडा ही सुगधित हो रहा था। घी के कारण फर्श इतना चिकना हो रहा था कि पैर फिसलते थे। फर्श अदर भी खूब ठडा था। मोजे पहनकर जाओ तो मोजे गदे हो, नगे पैर जाओ तो पैर गलें। जो हो, हम लोग काफी देर तक वहा रहे और सब चीजों को ध्यान से देखते रहे। मदिर मे खूब कोलाहल था। पुजारी ऊंचे स्वर मे मत्र पाठ करते हुए यात्रियो से पूजा करा रहे थे। स्त्री और पुरुष, बालक और वृद्ध, अमीर और गरीब सब भक्ति-विह्वल होकर पूजा कर रहे थे, जैसे वे किसी बड़े परिवार के सदस्य हो। भक्ति की पुनीत मदाकिनी प्रवाहित हो रही थी।

गोपेश्वर की भाति केदारनाथ का मदिर उत्तराखड के सबसे विशाल मदिरो मे से है। पिछले खड मे शिवजी प्रतिष्ठित हैं, बाहर सभामडप है, जिसमे कई एक मूर्त्तिया है।

मदिर से कुछ ही फासले पर आदिगुरु शकराचार्य की समाधि थी। उसे देखने गये। कहते हैं, केदारनाथ के मदिर का निर्माण शकराचार्यजी ने ही कराया था और यही पर उनके शरीर का लोप हुआ था। दक्षिण के किसी साधन-सपन्न व्यक्ति ने वह समाधि बनवा दी है। समाधि के एक कोने पर निर्माण कराने-वाले के नाम की तख्ती लगी है।

मदिर के पीछे तीन हाथ लबा अमृतकुंड है, जिसमे दो शिव-लिग हैं। पूर्वोत्तर भाग मे 'हसकुड' और 'रेतकुड' है। हसकुड मे लोग अपने मृतको की मुक्ति के लिए उनकी कुडलिया डाल जाते हैं। कई कुडलिया उसमे पडी हुई थी। हमें बताया गया कि रेत-कुड के निकट खडे होकर 'ओ नमो शिवाय' कहो तो उसके पानी मे बुलबुले उठने लगते है। पर यह चमत्कार हम लोगो के देखने मे नही आया। बुलबुले उठ जरूर रहें थे, लेकिन ऐसा दिखाई नही दिया कि 'ओ नमो शिवाय' कहने पर ही उठते हो।

मदिर के सामने कुछ कदम पर 'उदक-कुड' है, जिसके जल का यात्री लोग आचमन करते हैं। पुरी से दो फर्लांग पर भुकुड भैरव, आध मील पर चद्रशिला, डेढ मील पर चोरबाड़ी ताल (जिसे गाधीजी की भस्म-विसर्जन के वाद "गाधी सरोवर' कहते हैं) तथा कोई तीन मील पर वासुकि ताल है। हम लोग, निकट-वर्ती कुडो को देखकर पांच-छ सौ फुट की ऊंचाई पर भैरव की मूर्त्ति देखने गये। मूर्त्ति तो सामान्य थी, पर सारी चढाई बर्फ पर

होकर की। बडा आनद आया। ऊचाई पर होने के कारण वहां से केदारनाथपुरी तथा पर्वतो के दृश्य बड़े अच्छे लगे। मार्ग-दर्शक ने एक ऊचे पर्वत की ओर सकेत करके बताया कि वह 'भारतखूट' है अर्थात् भारत का छोर। उस पर्वत की ऊचाई लगभग २४ हजार फुट है, पर लगता ऐसा है, जैसे बिल्कुल हमारे पास ही हो।

'भुकुड भैरव' से सटी एक हिमानी झील है, जिसमे से मदाकिनी निकलती है। उद्गम बडा सादा है, जैसा कि प्राय नदियों का हुआ करता है। पर उसके दर्शन करके हमारा सिर श्रद्धा से झुक गया। भारतीय सस्कृति मे मदाकिनी का जो स्थान है, वह किसीसे छिपा नही है। उसके तट पर छोटे-बडे अनेक तीर्थ अवस्थित है। पता नही, किस युग से वह हमारे देशवासियो को अध्यात्म का पाठ देती आई है। निस्सदेह हमारे लिए तो उसका उद्गम एक महान् सस्कृति के उद्गम के रूप मे था।

मदाकिनी के अतिरिक्त अन्य छोटी-बडी नदियों की वहां भरमार है। मधुगगा, क्षीरगंगा, सरस्वती तथा स्वर्गारोहिणी के तो प्रत्यक्ष दर्शन होते है। कहते है, यही वह स्वर्गारोहिणी नदी है, जिसके किनारे-किनारे पाडव बर्फ मे गलने गये थे।

एक स्थान बडा भयकर बताया गया, पर हम वहा नही जा सके। कहते है, वहां से कूदकर बहुत-से भोले-भाले धर्मांध व्यक्ति मोक्ष पाने की अपनी मनोकामना पूरी करते थे। वह जगह इतना ऊंची है कि वहा से गिरने पर जीवन की तो कोई आशा ही नहीं रह सकती थी। अब वहा जाना निषिद्ध है।

छः महीने तक केदारनाथपुरी और मदिर वर्फ से ढके रहते

हैं। अप्रैल के अतिम सप्ताह या मई के आरभ मे पट खुलते हैं। यदि जाडे के दिनो मे कोई यहा आने का साहस करे तो उसे बर्फ के ढेर मे पता भी नही चलेगा कि कहा है पुरी और कहा है मदिर।

सबसे विचित्र बात यह है कि यहा के दृश्य थोडी-थोडी देर मे बदलते रहते है। जैसे-जैसे मौसम के हिसाब से बर्फ घटती-बढती है, पर्वतो का रूप भी परिवर्तित होता जाता है। बर्फ के कारण पहाडो पर अपनी कल्पनानुसार अनेक आकृतिया दीख पडती हैं। कही ऐरावत दिखाई देता है तो कही रथ, कही जटाजूट-धारी शकर भगवान् तपस्या करते दीख पडते है तो कही पार्वती। जिधर भी देखिये, उधर ही भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप दिखाई देते हैं।

मै सोचता था कि कौन-सी ऐसी प्रेरणा है, जो हर साल हजारो यात्रियो को इस सुनसान और बीहड स्थान की यात्रा के लिए विवश कर देती है ? अक्तूबर के अत मे, जबतक यहा के पट बद नही होते, नर-नारियो का ताता लगा रहता है। चढाई प्राण लेती है, पैरो मे छाले पड जाते है, कदम-कदम पर सास लेने के लिए रुकना पडता है, फिर भी क्या है, जो निरतर आगे बढने का साहस और इतनी लबी मजिल तय करने का बल प्रदान करता है ? ऐसे कई प्रश्न मन में उठते थे और उनका उत्तर वहा की भूमि का प्रत्येक कण दे रहा था।

जैसाकि हमें बताया गया था दोपहर बाद यहापर प्राय सूर्य के दर्शन नही हुए। शाम तक बराबर बादल घिरे रहे। खूब जोर का जाडा था।

शाम को हम सब आरती मे सम्मिलित हुए। भीड अधिक नही थी, लेकिन पुजारियो के मत्रपाठ और सामग्री की सुगधि से इस समय भी वहां बडा अच्छा लगा। आरती के बाद बाहर आये। तबतक बाहर अंधेरा फैलने लगा था और पुरी निस्तब्ध हो चली थी। ऐसा मालूम होता था, निद्रा-देवी उसे अपनी गोद मे समेट रही हो।

अपने निवास पर आये और भोजन करके कुछ देर तक बाते करते रहे। विष्णुभाई और प्रह्लाद के रास्ते मे छूट जाने का रह-रहकर खयाल आता था और बुरा लगता था।

पडा ने रजाइयो की व्यवस्था करदी थी। वैसे साथ मे भी काफी ओढने-बिछाने का सामान था, फिर भी रातभर जाडे से कुड-कुडाते रहे। टोली के किसी भी व्यक्ति को नीद नही आई। नीद न आने का एक कारण शायद यह भी था कि हम लोग ११७५० फुट की ऊंचाई पर थे और हवा के पतले होने के कारण सिर बडा भारी मालूम होता था।

जैसे-तैसे रात बीती। सवेरे बडे तड़के उठे। मौसम साफ था। बादलो का कही नाम भी न था। सर्दी इतनी तेज थी कि जेब से हाथ निकालने की इच्छा नही होती थी। नदी पर जाकर हाथ-मुह धोये तो ऐसा लगा कि उंगलिया कट गईं।

सात बजते-बजते मदिर पर भीड़ बढ़ने लगी और उसकी सीढियो के आगे पुस्तको, चित्रो, तांबे के कड़ो और पत्तियो आदि की छोटी-छोटी कई दुकाने बिछ गई। हम लोग फिर मदिर मे गये। कुछ साथियों को पूजा करनी थी, उन्होने की। इस बीच हम लोगो ने घूमकर मंदिर के चारों ओर की मूर्त्तिया देखी। कुछ

मूर्त्तियां तो मे बडी ही सुदर और भावपूर्ण थी। मदिर के बाहर और बस्ती के भीतर कई स्थानो पर बर्फ के ढेर लगे थे।

केदारनाथपुरी की बस्ती बहुत विस्तृत है। लगभग साढ़े तीनसौ घर हैं, पर अधिकाश पंडो के हैं। दूरी और ऊचाई को देखते मकान काफी अच्छे और मजबूत हैं।

आखिर वहा से विदा लेने का समय आया। साढे आठ बजे थे। मदिर के बाहर खडे होकर जब एक निगाह चारो ओर डाली तो बहुत-से चित्र सामने घूम गये। सामने महात्मा उपमन्यु तपस्या कर रहे हैं। उधर देखिये, गोत्र-हत्या का पाप दूर करने के लिए पाडव भगवान शकर का दर्शन करने चले आ रहे है। पुरवासी घी और मक्खन लिये कितनी भक्ति से उनका स्वागत कर रहे हैं। ब्रह्महत्या के पाप का प्रायश्चित करने के लिए मर्यादा-पुरुषोत्तम राम अपने भाई भरत और लक्ष्मरण तथा सीता के साथ चले आ रहे हैं। पर यह युवक कौन है, जिसका मुखमडल तेज से दीप्त हो रहा है ? ओहो, यह तो आदिगुरु शंकराचार्य है। वह देखिये, पर्वतो के उत्तुग शिखरो पर पर्वतराज और प्रकृति-देवी किस प्रकार आनद से चहलकदमी कर रहे हैं।

तभी दृश्य वदला। यात्रियो का कोलाहल, दुकानदारो की तरह-तरह की आवाजे, आखो मे श्रद्धा-भक्ति-भरे यात्रियो की विदाई !

जी नही होता था वहा से हटने का, पर अभी तो आधी यात्रा ही पूरी हुई थी। वदरीनाथ की यात्रा करनी बाकी थी।

: १५ :

केदारनाथ से वापसी

इधर गौरीकुड से चले थे तभी से चपाबहन की तबीयत कुछ गिरी हुई थी। केदारनाथ पहुचते-पहुचते उन्हे जोर का जाडा लगा और हरारत हो आई। रात जैसे-तैसे कटी। सबेरे उठी तो मालूम हुआ कि आगे की यात्रा उनसे पैदल न हो सकेगी। कुछ-कुछ ज्वर भी था। उनके लिए एक टट्टू किया गया।

सारी टोली तैयार हुई। जल्दी करते-करते ८॥ बज गये। सूर्योदय का दृश्य बडा ही मनोरम था। जैसे ही पर्वतो के पीछे बाल रवि का उदय हुआ ऐसा जान पडा, किसी चित्रकार ने श्वेत पर्वत-शिखरो की किनारी को सुनहरी रंग से अलकृत कर दिया है। ज्यो-ज्यो सूर्य का प्रकाश बढता गया, दृश्य भी बदलते गये। जीवन के वे चिर-स्मरणीय क्षण थे।

आकाश स्वच्छ। सुहावनी धूप चारो ओर फैली हुई। बडा प्रसन्न था सारा वायुमडल। यात्रियो के कोलाहल के अतिरिक्त सबकुछ मौन प्रार्थना मे लीन। हम लोगो ने कई चित्र खीचे। पर्वत-माला, पुरी और मदिर के दृश्य बहुत ही लुभावने थे। निगाह उनपर से हटती नही थी।

अधिकाश यात्री यहा एक ही रात ठहरते है। अगले दिन तडके उठकर चल देते है। इसका कारण सभवत: यह है कि एक

तो यहा ठड अधिक रहती है, दूसरे, यात्रियो को आगे जाने की जल्दी होती है। जो हो, मुझे लगा कि ऐसे स्थान पर दो-चार दिन अवश्य ठहरना चाहिए, जिससे आराम से सब चीजो को देखा जा सके, आनद लिया जा सके।

मदिर-कमेटी के मत्री वहुगुणाजी वहा नही थे, लेकिन कार्यालय के एक अधिकारी सज्जन से हमे बहुत सहायता मिली। उन्होने हमे देखने योग्य सब चीजे दिखा दी। वस्तुत उनके कारण ही हम थोडे समय मे वहा की अधिकाश वस्तुए देख सके।

हम लोगो ने निश्चय किया कि रात को गौरीकुड ठहर-कर आगे का कार्यक्रम बनावेगे। कुल सात मील चलना था, फिर भी विलब करना उचित नही था। मौसम बदल गया और वर्षा आ गई तो बडी कठिनाई होगी। इसलिए प्रकृति की उस महिमामयी स्थली को प्रणाम करके चल दिये।

सोचते थे कि लौटते मे उतार-ही-उतार है। दौड़ते-दौडते गौरीकुड पहुच जायगे, लेकिन अनुभव कुछ दूसरा ही हुआ। चढाई की अपेक्षा उतार कही अधिक थकानेवाला सिद्ध हुआ। थोडा चलने पर ही टागे इतनी दुखने लगी कि कदम उठाना मुश्किल हो गया। जैसे-तैसे रामबाडा चट्टी पहुचे। वहा काफी देर सुस्ताये। नाश्ता किया। जाते समय दूध मिल गया था। आते समय वह भी न मिला।

रामबाडा से चले तो ऐसा लगता था कि पैर उठ नही रहे हैं, कोई पकडकर खीच रहा है। उतार इतना अधिक था कि लाठी का सहारा होने पर भी धीमे चलना और शरीर का सतुलन रखना आसान नही था। हमारे एक साथी तो ठोकर खा गये और

लुढकते हुए काफी नीचे आकर रुके। अच्छा हुआ, वह रास्ते से इधर-उधर नही हुए, अन्यथा अनर्थ हो जाता।

१२ बजे के लगभग गौरीकुड पहुंचे। शरीर चूर-चूर हो रहा था। जितने यात्री लौटे थे, उनमे कुछ बंगाली महिलाएं भी थी। सबके चेहरो पर थकावट झलकती थी, सबके पैर थके थे।

गौरीकुण्ड क्या पहुंचे, मानों खोये प्राण फिर से मिल गये। सीधे तप्तकुंड पर गये। शरीर का चेकते पानी से खूब सेक किया। बडा आराम मिला। थकावट बहुत-कुछ दूर हो गई। स्नान करके धर्मशाला मे पहुंचे। तबतक सामान भी आगया। बिस्तर खोलकर लेटे तो उठने को जी ही नही करता था। भोजन तैयार हुआ। सभी के सिर मे बडा दर्द था। सोने की कोशिश करने पर भी किसीको नीद नही आई। थोड़ी देर आराम करके उठे, भोजन किया। फिर बस्ती मे घूमने चले। यहां शिलाजीत की कई दुकाने है। हिरन आदि पहाड़ी जानवरो की खाले भी बहुत मिलती है। हम लोगो ने कई दुकानों पर चक्कर लगाया, लेकिन कही कोई चीज पसंद न आई। जो पसद आई, उसके दाम तय न हो सके। शाम को आरती मे सम्मिलित होने की इच्छा थी, पर वह सभव न हुआ। खा-पीकर सो गये।

: १६ :

त्रिजुगीनारायण

सवेरे उठे। पैर और टागे बुरी तरह दुख रही थी, पर वहां तो 'चरैवेति, चरैवेति' चले चलो, चले चलो, के अतिरिक्त दूसरा रास्ता ही नही था ! चपाबहन रात को थकान और ज्वर के कारण बेचैन रही। उनके लिए अब टट्टू की सवारी करना भी सभव न था। डांडी की गई। यहा से सबका त्रिजुगीनारायण जाने का विचार था, लेकिन चपा-बहन की अस्वस्थता के कारण निश्चय किया गया कि टोली बंट जाय और हीरालालजी, चपाबहन तथा कुछ अन्य व्यक्ति सीधे फाटा-चट्टी पहुंचे और हम लोग त्रिजुगी-नारायण होकर वहां मिलें।

पौने छ बजे टोली रवाना हुई। पौने तीन मील पर सोम-प्रयाग आया। हम पहले ही बता चुके है कि इधर जहा-जहा दो नदियो का सगम होता है, वे स्थान प्रयाग कहलाते हैं। सोम-प्रयाग मे सोमनदी तथा वासुकी गगा मिलती हैं। यहा से एक रास्ता त्रिजुगीनारायण को चला जाता है, दूसरा रामपुर चट्टी को। यह सगम काफी निचाई पर है। यहा से त्रिजुगीनारायण की चढाई प्रारभ होती है। उतार के बाद वह चढाई बड़ी सुखकर लगी।

सारा रास्ता बडा सुदर है। हरियाली इतनी है कि देखकर जी हरा हो जाता है। नाना प्रकार के पुष्प वसत की याद

दिलाते है और उनकी महक थकान को भुला देती है। रास्ते मे शाकंबरी का मदिर आया। वहा कुछ देर रुके। टोली के जो लोग पिछड़ गये थे, उनके आ जाने पर आगे चले। यहा से एक पंडा साथ हो गया। वह तरह-तरह की कहानिया सुनाने लगा। एक हिमाच्छादित पर्वत-शिखर की ओर सकेत करके बोला, "वह देखिये, वे हिमराज है—पार्वती के पिता।" हम सबने उस ओर देखा। दृश्य की रमणीकता पर हृदय मुग्ध हो गया।

इधर के जगल मे गुलाब बहुत है। उसकी सुगधि से सारा वायुमडल बडा आनददायक हो रहा था। वृक्षो पर पक्षी चहचहा रहे थे। उनकी तान मे तान मिलाता एक श्रमिक युवक चट्टान का सहारा लिए मौज मे बासुरी बजा रहा था।

हमे बताया गया था कि इस रास्ते पर यात्रियो को सावधानी से चलना चाहिए, क्योकि यहा मक्खिया बहुत है। यात्रियो को काट लेती है, बडी पीडा होती है। लेकिन भगवत्कृपा से हम लोगो मे से किसीको भी इस विपत्ति का सामना न करना पडा और बडे आनद से ६। बजे त्रिजुगीनारायण पहुच गये।

यह स्थान बहुत बडा तीर्थ माना जाता है और हजारो यात्री वहा जाते है, लेकिन मेरी दृष्टि मे इस स्थान का महत्व इसलिए है कि ६॥ हजार फुट की ऊचाई पर होने के कारण वहा से चारो ओर बडे ही भव्य दृश्य दिखाई देते है। पौराणिक कथा है कि यहा शकर का विवाह हिमालय की कन्या पार्वती के साथ हुआ था। यहा छोटे-छोटे चार कुड है—ब्रह्मकुड, विष्णुकुड, रुद्रकुड और सरस्वतीकुड। इन कुडो मे से किसीमे स्नान किया जाता है तो किसीके जल मे आचमन। कुडो मे अनेक यात्री स्नान कर रहे

थे। बेहद गदगी थी। कुडो के निकट ही नारायण का मदिर है, जिसमे धातु की अनेक दर्शनीय मूर्तिया हैं। मदिर के बाहर सभा-मडप मे अखण्ड धूनी जलती रहती है। लोग बताते है कि शकर और पार्वती के विवाह के समय जो अग्नि प्रज्वलित की गई थी, वही आजतक चालू रखी गई है। धर्मपरायण भोले-भाले यात्रियो में यह कथा सुनकर बडी भक्ति-भावना उत्पन्न होती है। जो हो, स्थान वडा अच्छा है, पर गदगी के कारण अधिक समय रुकने को जी नही किया।

मदिर के बाहर छोटे-से प्रागण मे कई मदिर है। कुछ खडित मूर्त्तिया यत्र-तत्र रखी हुई है। इनमे की कई मूर्त्तिया ग्यारहवी-बारहवी शताब्दी से भी पुरानी बताई जाती है।

: १७ :

टोली बंटी

अच्छी तरह घूम-घामकर और चित्र लेकर आगे बढे। अब तो उतार-ही-उतार था। पिछले दिन की यात्रा मे पैर उतार के अभ्यस्त हो गये थे। इसलिए जोर पडने पर भी रास्ता बहुत अखरा नही।

१२ बजे के लगभग रामपुर चट्टी पहुंचे। वहा रुके, भोजन किया और शाम को फिर चलकर फाटा-चट्टी पहुचे। यही पर विष्णुभाई और ज्वरग्रस्त प्रह्लाद को छोड गये थे। प्रह्लाद का बुखार अब उतर गया था और वे दोनो बधु टोली के लौटने की राह देख रहे थे। उनकी हालत अच्छी देखकर बडी खुशी हुई। विष्णु-भाई ने बताया कि प्रह्लाद की तबियत तो हम लोगो के जाने के बाद ही ठीक हो गई थी, लेकिन कमजोरी अधिक होने के कारण उन्होंने केदारनाथ आने का खतरा उठाना ठीक न समझा। अच्छा ही हुआ। आराम मिल गया।

रात फाटा-चट्टी मे बिताई। चपाबहन को अब भी ज्वर था। इसलिए हम सब सोच मे पड़ गये। आपस मे चर्चा की कि क्या किया जाय। हीरालालजी की राय थी कि वह चंपाबहन को लेकर लौट जायं। हम लोग चाहते थे कि नही, सब चले। जो होगा, देखा जायगा। लेकिन चपाबहन खुद हिम्मत हार चुकी थी। उनसे

पूछते थे तो कहती थी कि तबियत जल्दी ठीक नही होगी और सबको परेशानी होगी। उन्हे समझाया, हिम्मत बधाई तो उनका इरादा बदला, लेकिन हीरालालजी ने कहा कि लौट जाना ही ठीक होगा। अत मे बडे दुख के साथ निश्चय किया गया कि हीरालालजी, चपाबहन, शाता, सुमित्रा तथा राजकृष्णजी आदि लौट जाय। शाता और सुमित्रा दोनो बदरीनाथ जाने को बहुत उत्सुक थी, लेकिन उन्हे भी अनिच्छापूर्वक अपने पिताजी के साथ लौटने का निश्चय करने के लिए विवश होना पडा। टोली के इस प्रकार छिन्न-भिन्न हो जाने से सबको बडा बुरा लगा।

अबतक की यात्रा मे सबसे अधिक साहस, धीरज तथा विनोद-प्रियता रखनेवालो मे हीरालालजी का स्थान सबसे आगे था। कडी यात्रा के बाद जब हम पूछते थे कि उनका क्या हाल है तो वह सहज मुस्कान के साथ कह देते थे—बिल्कुल ठीक। हम लोग अपने पैर के छाले एक दूसरे को दिखाते थे या और कुछ शिकायत करते थे, लेकिन हीरालालजी ने कभी हैरानी व्यक्त करनेवाला एक शब्द भी कभी मुह से नही निकाला। गौरीकुड लौटकर उनके सिर मे बडी पीडा हुई तब भी चुपचाप लेटे रहने के अलावा उन्होंने कुछ भी नही कहा। सयोग से उस दिन उनका नाती चि० विजय कुछ परेशान होकर रोने लगा तो उन्होने चुपचाप अपने पैर का तलवा दिखाकर कहा, "विजयबाबू, तुम जरा-सी बात पर रोते हो, लेकिन देखो तो, मेरा पैर कैसा होगया है।"

मैं उसी समय अकस्मात बाहर से अदर आगया। मैने उनका पैर देखा तो दग रह गया। छाला पडकर फूट गया था और काफी बीच की खाल उड गई थी। मैने कहा—"आपने बताया

क्यो नही?" उन्होने हँसकर उत्तर दिया—"इसमे बताने की क्या बात थी। कोई दर्द थोडा होता है, मै तो विजय को बहलाने के लिए दिखा रहा था।"

हम लोग भुक्तभोगी थे। जानते थे कि छालो के पड़ने और फूटने से कुछ समय तक कितनी तकलीफ होती है। उनके तो तलवे मे छाले थे! अबतक वह कैसे पैदल चलते रहे होगे! उनकी सहन-शीलता देखकर जी उमड आया।

अगले दिन छ बजे रवाना होकर नाला-चट्टी पहुंचे। इसी रास्ते हम केदारनाथ गये थे। २३ मील लौट आये थे और अब हमे बदरीनाथ के लिए नये रास्ते पर जाना था, लौटनेवाली टोली को सीधा गुप्तकाशी। टोली बटी तो सबकी आखे डबडबा आई।

१८

उषा-अनिरुद्ध की प्रेम-लीला-भूमि

नाला-चट्टी से हमारी टोली अब बाई ओर के मार्ग पर अग्रसर हुई। १। मील पर 'उत्तराखड विद्यापीठ' आया। पर्वतो के मध्य निर्जन स्थान पर विद्यापीठ का भवन बडा सुदर लगता है। इस स्थान का शिलान्यास केदारनाथ-मदिर के स्व० रावल श्री नीलकठ ने किया था। आज उसके प्रबध के लिए एक ट्रस्ट है और उसमे सस्कृत, आयुर्वेद, उद्योग आदि की शिक्षा दी जाती है। लगभग ३०० विद्यार्थी शिक्षा पाते है।

विद्यापीठ के निकट ही मदाकिनी का पुल है। उसे पार करके ऊखीमठ जाते है। पुल से ऊखीमठ कोई १।। मील है, लेकिन यह चढाई बडी कठिन है। धूप अधिक होने के कारण हमे और भी अखरी। छाह के लिए रास्ते मे कोई पेड भी नही था। १२ बजे ऊखीमठ पहुचे।

बदरीनाथ के लिए जो महत्व जोशीमठ का है, केदारनाथ के लिए वही महत्व ऊखीमठ का है। जाडे के दिनो मे केदारनाथ के पट बद हो जाने पर वहा के रावल तथा प्रबधक यही रहते है और यहीपर पूजा होती है। ऊखीमठ का मदिर नया-सा जान पडता है। मूर्तिया भी बहुत-सी नई है, कुछ पुरानी भी हैं। हम लोग मदिर के अहाते मे ही यात्रियो के निवास के लिए निर्मित

कमरो मे ठहरे।

जबसे दिल्ली से रवाना हुए थे, दाढी नही बनाई थी। बाल काफी वढ गये थे। अभ्यस्त न होने के कारण मुह पर खुजली आती थी और कुछ अटपटा-सा लगता था। इसलिए सबने हजामत बनाई। उषा-कुड मे कपडे धोये, स्नान किया। तबतक खिचडी तैयार होगई। सबने खाई। भोजन के बाद घूमने निकले।

यहा का मदिर बडा विशाल है। अहाते के एक मडप मे कई मूर्त्तिया थी, जिनमे नटराज की मूर्त्ति पुरानी थी। अष्टधातु की सूर्यमुखी फूलवाली दो सूर्य-मूर्त्तिया थी। भीतर का शिवलिंग मुखाकृतिवाला था। पुरुष-प्रमाण के दाढीवाले किसी सामत की भी मूर्त्ति मदिर मे है। वही बगल मे किसी दाढीवाले शैवाचार्य के पास राजकुमार और राजकुमारी की दो मूर्त्तिया है।

भागवत मे उल्लेख है कि पूर्वकाल मे बाणासुर नामक दैत्य की कन्या उषा इसी स्थान पर रहती थी। श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध के प्रति उसकी आसक्ति हो गई और कुछ समय तक उनकी प्रेम-लीला चलने के बाद उनका विवाह हो गया। इसी उषा के नाम पर इस स्थान का नाम 'उषामठ' पडा, जो कालातर मे बिगडकर 'ऊखी-मठ' हो गया। यहा के मदिर मे उषा और अनिरुद्ध की मूर्त्तिया है। एक मूर्त्ति माधाता की है। यहा का सबसे बडा और प्रधान मदिर ओकारेश्वर शिवलिंग का है। मदिर पर दक्षिण की स्थापत्यकला का प्रभाव है।

शाम को रावल महोदय से मिलने गये। केदारनाथ के रावल दक्षिण भारत के जगम गोसाई (लिंगायत) जाति के होते है। उनके बड़े ठाठ-बाट है। रावल युवक थे। बडी सरल प्रकृति के

जान पडे। हमने चित्र खिचवाने को कहा तो झट राजी हो गये। बहुत देर तक उनसे चर्चा होती रही। केदारनाथ की गद्दी देखी। सजावट थी, पर गद्दी विशेष आकर्षक नही थी। उसीके एक ओर बैठे हुए पुजारी यात्रियो को प्रसाद दे रहे थे। मूर्त्तिया यहा काफी है और उन्हे इस ढग से रखा गया है कि यात्रियो पर उनका बडा प्रभाव पडता है।

ऊखीमठ बडी चट्टी है। यहा राजकीय चिकित्सालय, डाकघर, चौकी आदि है। ऊचाई लगभग ४३०० फुट है। फिर भी खूब गर्मी थी। शाम को बूदें आईं। रात को मौसम अच्छा रहा।

यहा किसीने बताया कि केदारदाथ से वापसी मे व्यूग-चट्टी के आगे जूरानी मे एक बगीचा आता है। वहा से एक मील के उतार के बाद काली नदी का पुल मिलता है। करीव उतनी ही दूरी पर कालीमठ है, जो काली नदी के तट पर वसा हुआ है। उसका उल्लेख 'कालीक्षेत्र' के नाम से भी मिलता है। कालीमठ मे काली का मदिर है, जिसमे शववाहिनी काली की मूर्त्ति है। पर हमे तो इसका पता नही था। अत उसे देखने से वचित रह गये।

ऊखीमठ मे वाजार मजे का है। जरूरत की सव चीजें मिल जाती है। दाम वेशक महगे थे। सनलाइट सावुन की टिकिया आठ आने मे मिली। मिश्री तीन रुपये और दूध डेढ रुपया सेर। यह महगाई स्वाभाविक थी, क्योकि यात्रा के दिनो मे इधर के लोग कमाई न करे तो फिर कव करे!

हमारी यात्रा का यह द्वितीय चरण था। वदरीनाथ की यात्रा अव प्रारभ होनेवाली थी।

: १६ :

यात्रा का द्वितीय चरण

ऊखीमठ से ५ बजने मे १० मिनट पर रवाना हुए। उस समय मौसम बहुत बढ़िया था। नदी के उस पार उत्तरकाशी की इमारते हरियाली के बीच बडी मोहक लग रही थी। इस यात्रा मे अब बड़ी विचित्र अनुभूति हो रही है। दिन मे चलकर जब किसी चट्टी पर रात्रि-वास करते है तो ऐसा लगता है कि सवेरे उठा ही नही जायगा, लेकिन नित्य नियम से ३ बजे आख खुल जाती है और थकान का नाम भी नही रहता, मानो नया दिन हुआ हो, पिछले दिन का सुख-दु ख विगत भूत की वस्तु बन गई हो और अब आगे हो नया मार्ग, नया उत्साह और नई प्रेरणा।

ऊखीमठ से थोडा आगे चलने पर मदाकिनी का साथ छूट गया। दूसरी ओर को मुडे तो देखते क्या है कि फिर एक नदी साथ होगई है। उसका नाम था आकाश-गामिनी गगा। इसका उद्गम तुगनाथ मे है। इधर रास्ता निराला है। एक पर्वत की लबी परिक्रमा करनी पडती है। रास्ते मे कई पर्वत ऐसे मिले, जिनसे शिलाजीत निकाला जाता है। ग्वालियाबगड़ चट्टी तक उतार-ही-उतार रहा, लेकिन बाद मे इतनी कडी चढाई आई कि छठी का दूध याद आ गया। अच्छा यह था कि सवेरे का समय था, अन्यथा वही दशा होती जो गुप्तकाशी पहुचते समय हुई थी।

चट्टी आने से कुछ पहले दो साधू बुरी तरह झगडते मिले। वे एक दूसरे को गदी गालिया दे रहे थे। सारा झगडा थोडे-से आटे के पीछे था। हम लोगो ने समझाने की कोशिश की, पर वे न माने। गालिया देते रहे। मुझे झुझलाहट हो आई। मैने कहा, "भगवा कपडे पहनकर यो लडने मे तुम्हे शर्म नही आती। अव अगर एक भी गाली मुह से निकाली तो मै अपने उस्तरे से तुम्हारे सिर और मुह के बाल साफ कर दूगा।"

इस धमकी से वे डरे तो क्या होगे, लेकिन चुप हो गये।

१०॥ वजे के लगभग पोथी-बासा पहुचे। छोटी-सी चट्टी है। वहा रुककर स्नान किया, भोजन किया और विश्राम करके फिर आगे वढे। सवेरे ८ मील चल चुके थे। २॥-३ मील चलकर शाम को वाणियाकुड-चट्टी पर रुकना था। फासला अधिक नही था, लेकिन चढाई-ही-चढाई थी। इधर पहली बार खूब घना जगल मिला। चिनार के ऊचे-ऊचे वृक्षो के कारण रास्तेभर छाह रही। दृश्य भी नई तरह के थे। कई कच्चे पहाड दूर से दिखाई दिये। देखकर ऐसा लगता था कि वे राख के हैं। एक पहाड का कुछ भाग ढह गया था। उसके साथ किसी गाव के कुछ घर भी पाताल को चले गये थे।

४ वजे वाणियाकुड पहुचे। चिनार के जगल के वीच यह चट्टी वसी है। सामने तुगनाथ का शिखर दिखाई देता है, वाईं ओर वदरीनाथ के हिममडित धवल पर्वत। हम लोग लगभग ८५०० फुट की ऊचाई पर पहुच गये थे। मजे की सर्दी शुरू हो गई। काफी यात्री यहा इकट्ठे होगये थे। उनमे ८२ वर्ष की एक वगाली वृद्धा थी। चेहरे पर झुर्रिया, कमर झुकी, लाठी के सहारे

आगे बढी जा रही थी । मैने उन्हे प्रणाम किया । बात की तो मालूम हुआ कि वह तारकेश्वर से आ रही थी और केदार-बदरी की यह उनकी तीसरी यात्रा थी। भक्ति-भावना से उनका चेहरा दीप्त हो रहा था । मै दग होकर उनकी ओर देखता रह गया ।

बबई के एक धनिक सज्जन यात्रा कर रहे थे । कई बार मिले तो जान-पहचान होगई । दुबले-पतले बीमार-से थे । हम लोगो ने यहा साथ-साथ चाय पी । फिर वह अपनी टोली मे चले गये । थोड़ी देर मे उनका नौकर दौडा आया । बोला, "सेठजी बहुत बीमार हो गये है । आपको बुला रहे है ।"

मै वहा पहुचा तो देखा कि वह बिस्तर पर पडे है और दिल जोर से धडक रहा है । मैने नाडी गिनी । करीब १३० निकली ।

मैने उन्हे समझाया कि थकान से ऐसा हो गया है । कुछ हल्का भोजन करके सो जाइये । उन्होने ऐसा ही किया । सवेरे तक उनकी तबियत सुधर गई ।

तुगनाथ जाने के लिए प्राय. यात्री रात को यही ठहर जाते है और प्रात.काल उठकर चल देते है । चढाई अधिक होने के कारण सवेरे का चलना सुखकर होता है, नही तो धूप के मारे चलना दूभर हो जाता है ।

रात को चैन से सोये, सवेरे ४-१० पर तैयार होकर तुगनाथ की ओर बढे । एक मील पर चोपता-चट्टी आई । वहा से एक रास्ता तुगनाथ को जाता है, दूसरा सीधा भीमउडार-चट्टी को । बहुत-से यात्री चढाई के मारे तुगनाथ को छोड देते है और सीधे भीमउडार चले जाते है । तुगनाथ से भी भीमउडार ही जाना पडता है ।

[illegible] से तुगनाथ ८ मील है । उत्तराखड की यात्रा

मे सबसे अधिक ऊचाई पर यही मदिर है—१२,०७२ फुट पर। ज्यो-ज्यो ऊपर चढते जाते थे, अलौकिक दृश्य दिखाई देते थे। मानो किसी चित्रकार ने पर्वत-मालाओ को चित्रित कर दिया हो। ऊचे-नीचे पहाडो की पक्तियो मे सबके ऊपर थी बर्फ से ढकी एक लबी गिरिमाला, जो प्रहरी की भाति खडी दिखाई देती थी। बिना स्वय देखे उसके सौदर्य की कल्पना नही की जा सकती। हम लोग आगे-आगे बढते जाते थे, लेकिन कदम-कदम पर रुककर पीछे भी देखते जाते थे। कितनी अद्भुत है प्रकृति की माया ! सृष्टि के जाने किन उदात्त क्षणो मे प्रकृति ने गिरिराज हिमालय की रचना की होगी! सहस्रो यात्री प्रति वर्ष यहा आते है और यहा की विराटता के दर्शन कर कितने आनद का अनुभव करते है! मार्ग मे एक ७२ वर्ष का वृद्ध मिला। सधे पैरो से पग-पग पर सास लेने के लिए रुकता हुआ, तुगनाथ की ओर बढा जा रहा था। और भी बहुत-से यात्री जा रहे थे। रास्ते के वृक्ष पुष्पो से सुशोभित हो रहे थे। जगली गुलाब के फूल भी कई स्थानो पर खिले हुए थे।

लेकिन वृक्षो और पुष्पो की यह शोभा बहुत देर तक साथ नही दे सकी। जैसे-जैसे ऊचाई पर चढते गये, हरियाली कम होती गई और जब ऊपर पहुचे तो ऐसा मालूम हुआ कि किसी नई दुनिया मे आ गये हैं। हरियाली पीछे छूट गई थी और अब नगे पर्वतो का समूह चारो ओर था।

: १० :

तुंगनाथ

सवा सात वजे तुगनाथ पहुचे। उसकी जैसी प्रशसा सुनी थी, उससे भी कई गुना अधिक सुदर पाया। धार्मिक दृष्टि से इस स्थान का वडा महत्व है। यह तृतीय केदार है। यहा शिवजी का मदिर है। शीत के दिनो मे यहा की गद्दी मक्कू मे चली जाती है। शिवजी का मदिर सवसे ऊची चोटी पर वना है। उसके आसपास और भी कई मदिर है। मुख्य मदिर मे विष्णु और शिव की संयुक्त मूर्त्ति है। उसके पृष्ठ-भाग मे वेदव्यास, शकराचार्य आदि की मूर्त्तिया है। आकाशगामिनी गगा एक छोटे-से कुड से निकलती है। उस कुड मे यात्री स्नान करते है।

मदिर के वाहर चवूतरे पर खडे होकर जव सामने दृष्टि जाती है, तो यात्री आनद-विभोर हो जाता है। वह देखिये गंगोत्री। उसके वरावर जो ऊची चोटी दिखाई देती है, वह यमुनोत्री है। उसी पक्ति मे कुछ ही फासले पर मुकुटधारे केदारनाथ का शिखर है। उसके वरावर है वदरीनाथ। ये सारी शृखलाए एक ही स्थान पर खडे होकर एक ही पक्ति मे देखी जा सकती है।

हमारा परम सौभाग्य था कि उस दिन आकाश मे वादल का नाम भी नही था और सूर्य खूद तेजी से चमक रहा था। पर्वतो का हृदय खिलखती धूप मे वडा ही भव्य दिखाई दे रहा था।

कभी-कभी क्या, अक्सर ऐसा होता है कि यात्री ऊपर पहुचते है कि बादल हो आते है और ऊपर बताई शृखलाए दिखाई नही देती वडी निराशा होती है तब। डर-भी लगता है। कही वर्षा होगई तो नीचे उतरना मुश्किल हो जायगा। ऊपर की सर्दी को वहा के रहनेवाले तो सहन कर लेते हैं, लेकिन बाहर से आनेवाले यात्रियो को बडी मुसीबत होती है। इसलिए प्राय यात्री यहा रात को नही ठहरते है। मदिरो के दर्शन किये, पूजा की और आगे वढ गये। मौसम खुला हो तो दो-एक दिन यहा ठहरने की व्यवस्था रखनी चाहिए।

सर्दी काफी थी, पर ज्यो-ज्यो दिन बढता गया, धूप तेज होती गई और सर्दी कम होती गई। एक ब्राह्मण बालक वाणियाकुड से ही हम लोगो के साथ हो लिया था। उसने पूजा कराई। पूजा के निमित्त सारा मदिर अच्छी तरह से देख लिया। कई मूर्त्तिया वडी सुदर है। मदिर वही दाक्षिणात्य शैली का है।

दर्शन के बाद जलपान किया, सुस्ताये और आगे की यात्रा को चल दिये। आगे उतार-ही-उतार था, ऐसा उतार कि अपनेको सभालना मुश्किल। रास्ता साप की भाति टेढा-मेढा, ऊवड-खाबड, छोटे-वडे पत्थर रास्ते के वीच मे वेहिसाव पडे हुए। लाठी टेक-टेककर जैसे-तैसे आगे वढते चले। लाठी फिसल जाय तो विना प्रयास के नीचे, पाताल मे पहुच जाइये। देखकर रोगटे खडे होते थे। पेड का नाम-निशान न था। दाई ओर सूखे-रूखे पर्वत, दूसरी ओर अधेरी गहरी खाई। कभी ऊपर को देखते तो कभी नीचे को। वह दृश्य आज भी याद करके रोमाच हो आता है।

: २१ :

गोपेश्वर में

दो मील का उतार सवा घटे मे पार करके ११।। बजे भीम-द्वार-चट्टी पहुचे और थोड़ी देर विश्राम करके फिर आगे बढे। चित्रपट की भांति अब दृश्य एकदम बदल गया। ऊचे-ऊचे पेड और उपत्यकाए आने लगी। इधर हरियाली खूब है,दूर-दूर तक फैली हुई।२।। मील चलकर पागरवासा पहुचे। उतार था और घना वन। रास्ता भारी नही लगा। आगे चार मील और चलकर मडल-चट्टी पहुचे। सारे रास्ते घना वन रहा। इतना लबा और इतना सघन वन आगे कही भी नही मिला। कहते है कि इस वन मे कभी-कभी भालू तथा दूसरे वन्य पशु मिल जाते हैं, लेकिन यात्रियों पर वे आक्रमण नही करते।

तुगनाथ से आठ हजार फुट नीचे उतरे। मडल-चट्टी कुल ४ हजार फुट की ऊचाई पर है। वालखिल्य नदी की तलहटी मे बसी है। यहा से ढाई मील पर अत्रि ऋषि की पत्नी अनुसूया का मदिर है, जहा साल मे एक बार मेला लगता है। चमोली यहा से कुल ८।। मील रह गई है। वहा से पीपलकोटी तक बस मिल जायगी और फिर ३८ मील चलकर बदरीनाथ पहुंच जायंगे।

शाम को नदी मे कपड़े धोये, अच्छी तरह स्नान किया। लौट-

कर भोजन किया। रात को श्री आलमसिंह मिलने आये। यह इधर के अच्छे रचनात्मक कार्यकर्त्ता है। साहित्य-प्रेमी भी है। लोगो मे पठन-पाठन के लिए रुचि उत्पन्न करने की दृष्टि से एक पुस्तकालय खोल रखा है। वहुत देर तक वात करते रहे। यह प्रदेश वहुत ही पिछडा हुआ है। उनका कहना था कि कुछ सेवाभावी व्यक्ति यहा आवे और उन लोगो के वीच रहकर नि स्वार्थ भाव से काम करे, तव कुछ होगा। लेकिन इतनी फुरसत किसे है। लोग मेहमान की तरह आते है और वडी-वडी वाते करके चले जाते है। इससे कुछ नही होने का। उनकी वात मे सचाई थी।

रात मडलचट्टी मे बिताकर अगले दिन सबेरे ५-१५ पर रवाना हुए। २ मील पर वैरागिनी और आगे उतने ही फासले पर सिरोखोमा-चट्टी मिली। अनतर डेढ मील पर गोपेश्वर। सारा रास्ता उतार-चढाव का था।

गोपेश्वर प्राचीन सिद्धस्थान है और उसके विशाल मदिर मे गोपेश्वर के नाम से शिवलिंग स्थापित है। मंदिर के आगन मे अष्टधातु का त्रिशूल है। एक ओर को नवग्रह है। स्कद-पुराण मे लिखा है कि इस स्थान पर महादेव ने काम को भस्म किया था। नीचे कुछ ही दूरी पर वैरागिनी नदी की धारा है, जिसमे यात्री स्नान करने का वडा माहात्म्य मानते है। गोपेश्वर मे चतुर्थ केदार श्री रुद्रनाथ की गद्दी है। यहा मदिर मे पार्वती आदि की प्रतिमाए है। व्यवस्था एक रावल महोदय द्वारा होती है, जो सरकारी नियत्रण मे होते हुए भी स्वतत्ररूप से काम करते है। हम पहले ही वता चुके है कि उत्तराखड की यात्रा मे सवसे

विशाल मंदिरो में इस मदिर का स्थान है। पर यह मदिर बडी ही जीर्ण अवस्था मे है। कई जगह से टूट-फूट रहा है। ऊपर के भाग की वहा के लोगो ने मिलकर मरम्मत कराई है, लेकिन उससे पूरी मजबूती नही हो पाई। अधिकारियो को इस ओर तुरत ध्यान देना चाहिए।

गोपेश्वर पर विष्णु का राज्य समाप्त होकर शिव का प्रारभ हो जाता है। केदार-बदरी का यह मध्य-स्थान है।

हम लोगो ने मदिर को अच्छी तरह से देखा। मूर्त्तियो के चित्र लिये। बडे मदिर के बाहर चबूतरे पर एक स्त्री और पुरुष हारमोनियम बजाते हुए गा रहे थे। स्त्री का स्वर बडा सुरीला था। उसने एक-दो गाने हिंदी के सुनाये। अच्छे लगे।

: २२ :

चमोली और पीपलकोटी

गोपेश्वर से तीन मील चलकर चमोली पहुंचे। यहा से पीपलकोटी तक वस जाती है। चमोली काफी बडी जगह है। तहसील, डाकघर, तारघर, चिकित्सालय, पुलिस चौकी, सबकुछ है। अलकनदा अब फिर साथ होगई।

चमेली पहुचे उस समय ६। बजे थे। बहुत थकान हो रही थी। इसलिए सोचा कि थोडी देर धर्मशाला मे आराम करे। इस बीच कोई जाकर डाक देख आवे। डाक के लिए यहा के पोस्टमास्टर का पता दे दिया था। धर्मशाला पहुचे,पर वहा भीड बहुत थी। सब लोग आ गये तो तय किया कि अच्छा हो कि यहीपर भोजन से छुट्टी पा ले और सबसे पहले जो वस मिले, उससे पीपलकोटी चले चलें। वही रात को ठहरे। सामान तो सीधा बस के अड्डे पर भिजवाया और हम लोग भोजन के लिए किसी अच्छी दुकान या होटल की खोज मे निकले। पूछने पर मालूम हुआ कि वस के अड्डे पर ही एक अच्छा ढाबा है। वहा पहुचे तो देखा कि वडी भीड है। होटल की मेजे भरी हुई थी। जरा-सी गुजाइश हुई तो हम लोग बैठ गये। एक रुपया थाली तय हुआ। लेकिन खानेवाले अधिक थे, परोसनेवाले उस हिसाव से कम और हरकोई जल्दी कर रहा था। खैर, जैसे-तैसे हम लोगो की वारी आई।

वड़े मोटे चावल मिले। दाल-साग कम पड गये। जो और जितना मिला, पेट मे डालकर बाहर आये। तवतक वोभियो ने वस पर सामान चढा दिया था। बस छूटने ही वाली थी। हम लोग दौड-कर उसमे बैठ गये।

चमोली को लाल सागा भी कहते है। सागा का अर्थ है 'पुल'। यहा का पुल लाल होने के कारण इधर के लोगो ने यह नाम रख दिया होगा। इस पुल को पार करके वस्ती मे प्रवेश करते है।

यहा की ऊचाई ३३०० फुट है। हरिद्वार से यह जगह १३६ मील है। वहा से बस सीधी आती है। लेकिन चूकि हमे पहले केदारनाथ जाना था, इसलिए रुद्रप्रयाग गये और घूमकर यहा पहुचे।

अलकनदा के किनारे-किनारे १२ मील का सुदर रास्ता तय करके करीव १२ बजे पीपलकोटी पहुचे। वस की सडक यहीं तक है। आगे जोशीमठ तक सडक बन रही है। जब वह चालू हो जायगी तो वदरीनाथ के लिए कुल १९ मील पैदल चलना पडा करेगा।[1]

वस से पीपलकोटी पहुचे थे, फिर भी जी हैरान हो गया। ठहरने को जगह मिलने पर विस्तर खोल दिये और चुपचाप लेट गये। थकान के मारे नीद तो कहा आनी थी, पड़े-पडे यात्रियो का शोर सुनते रहे।

[1] मालूम हुआ है कि यह सड़क अब तैयार हो गई है और उसपर जीपें चलने लगी है।

धूप कम होने पर स्नान करने निकले। कुछ कपड़े भी धोने थे। बस्ती के बाहर कई नल लगे थे और नहाने की अच्छी व्यवस्था थी। कुछ दूर पर एक पतला-सा झरना भी बह रहा था। झरने पर स्त्रियो का जमघट था, इसलिए हम लोग नलो पर पहुचे। कुछ देर प्रतीक्षा करने पर हमारी बारी आई। पानी बहुत थोडा-थोडा आ रहा था। इसलिए कपडे धोने और नहाने मे काफी समय लगा। भाभी (मार्तण्डजी की पत्नी) टोली की अन्य महिलाओ के साथ झरने पर चली गई थी। हम लोगो ने छुट्टी पाई तबतक वे भी निबट गई। सब साथ-साथ अपने डेरे की ओर चले, लेकिन रास्ते मे भाभी को ध्यान आया कि उनका चश्मा झरने पर ही रह गया। मार्तण्डजी को साथ लेकर वह झरने पर वापस गई। वहा जाकर देखा कि चश्मा नही है। अब क्या करे ! बिना चश्मे के उन्हे बडी हैरानी होती और नया चश्मा बनने की सुविधा वहा थी नही। कुछ बच्चे वहा खेल रहे थे। उनसे पूछा तो उन्होने इन्कार कर दिया। बडी परेशानी हुई। कुछ लडके पुल के पास थे। आगे बढकर उनसे पूछा तो उनमे से एक ने चश्मा निकालकर दे दिया। जान-मे-जान आई।

लौटकर शाम के खाने का डौल जमाया। कुछ लोगो का व्रत था। उनके लिए खोवे की चीज़ो की व्यवस्था हुई। एक आदमी से दूध का तय हुआ। जब वह दूध लेकर आया तो बडा ऊचा मिजाज दिखाने लगा। जितना कहता था, नापने पर दूध उससे कम निकला। इसपर मार्तण्डजी को झुझलाहट हुई। उन्होने कहा—"हम दूध नही लेंगे।" वह बोला—"मै तो आपके लिए इतजाम करके लाया हू। लेना पडेगा।" इसपर बात और बढ गई।

कहा-सुनी होगई। आखिर मार्तण्डजी ने पैसे निकालकर उसके सामने पटक दिये और कहा, "तुम दूध भी ले जाओ और ये पैसे भी।"

जैसे-तैसे मामला निपटा। इधर के लोगो मे लालच बहुत है। शायद इसलिए कि यात्रा के छ. महीनो मे उन्हे सालभर के गुजारे का प्रबध कर लेना होता है। न करे तो जाडे के दिनों मे, जब कि आदमी तो क्या, परिंदा भी उधर दिखाई नही देता, वे क्या खाय।

पीपलकोटी छोटी-सी जगह है। बस्ती अधिक नही, है पर बदरीनाथ की यात्रा का अतिम बस का अड्डा होने के कारण वहां काफी भीड़-भाड़ रहती है। मुसाफिरो की सुविधा के लिए तारघर और डाकखाना भी है।

३१०० फुट की ऊंचाई होने पर भी यहा बड़ी गर्मी थी।

दोपहर को हम जिस समय बस से उतरे थे, उसी ससय दिल्ली की हरिजन-उद्योगशाला के कुछ छात्र और अध्यापक भी दूसरी बस से उतरे थे। वे सीधे हरिद्वार से आये थे। बातचीत मे मालूम हुआ कि वे बदरीनाथ के मदिर मे प्रवेश करने जा रहे है। हमने पूछा कि अगर अधिकारियो ने अदर नही जाने दिया तो? उन्होने जवाब दिया—"तो लौट आवेगे।"

सुनकर मन मे द्विविधा पैदा हुई। क्या उस अवस्था मे हम लोगो का मदिर मे जाना उचित होगा? आपस मे चर्चा भी की अत मे यह सोचकर समाधान किया कि बदरीनाथ पहुचकर जैसी स्थिति सामने आवेगी, उसे देखकर निर्णय करेगे।

: २३ :

बीहड़ रास्ते पर

पूरी तैयारी करके सोये, जिससे सवेरे जल्दी-से-जल्दी उठकर चल दे। पर रात को नीद बहुत कम आई। कुछ तो स्थान की कोताई थी, दूसरे, यात्री एक-दो बजे तक शोर करते रहे। जरा देर को आख लगी कि उठ बैठे। शौचादि से छुट्टी पाकर सवा चार पर रवाना होगये। चमोली से यहातक १० मील बस मे बैठ लिये थे, इसलिए चलना शुरू करने पर ऐसा लगा मानो पैदल-यात्रा का पुन श्रीगणेश हुआ हो। कधो पर वही सामान, हाथ मे लाठी। पैर के छाले तो फूट चुके थे। चुस्ती से बदरीनाथ के रास्ते पर चल पडे, अलकनंदा के किनारे-किनारे। कुछ दूर तक खूब चौडी सडक मिली।

चार मील का रास्ता आराम से कट गया। गरुडगगा पहुचे। बड़ा सुदर स्थान है। कहते है, यह गरुड की तपोभूमि है। विष्णु भगवान का वाहन होने के लिए यहा गरुड ने तपस्या की थी। पास ही 'गरुडगगा' नाम की छोटी-सी नदी बहती है। धार्मिक लोगो का कहना है कि यहा का पत्थर घर मे रखने से साप का डर नही रहता। जो हो, जगह अच्छी लगी। काफी यात्री गरुड-कुण्ड मे स्नान कर रहे थे। हम लोग तो धूप होने से पहले अधिक-से-अधिक रास्ता चल लेना चाहते थे। इसलिए थोडी देर रुक

कर आगे बढ़े।

दो मील पर टंगणी और टगणी से उतनी ही दूर पर पाताल-गंगा-चट्टिया मिली। पाताल-गंगा के एक मील इधर से ही रास्ता बड़ा विकट है। चलते हुए डर लगता है। पहाड़ राख का-सा है और रास्ता इतना संकरा कि दो आदमी एक साथ नहीं चल सकते। पता नही, टट्टू और खच्चर उसे कैसे पार करते हैं। विष्णुभाई ने बताया कि पिछली बार जब वह बदरीनाथ गये थे तो यहीपर उनकी टोली का एक खच्चर फिसलकर यमलोक को सिधार गया था। बहुत-सा सामान चूर-चूर हो गया था। इस मार्ग के आरभ होते ही टट्टूवाले यात्रियों को टट्टुओं पर से उतार देते हैं। एक और बड़ी भयकर बात है। ऊपर से जब-तब छोटे-बड़े पत्थर लुढकते रहते है, जिससे यात्रियो को बडा खतरा रहता है। सिर पर पत्थर आ पडा तो होगई यात्रा! बडी सावधानी से वहां से होकर निकलना पडता है। लोग जमा-जमाकर पैर रखते है और डर के मारे इधर-उधर नही देखते। दिल कांपता रहता है कि कही ऊपर से वज्रपात न हो जाय। हजारों यात्रियों के जीवन का प्रश्न है। अधिकारियों को चाहिए कि वे रास्ते को सुधारने के लिए शीघ्र ही कदम उठावें। बरसात के दिनो में यह रास्ता बद हो जाता है। तब ऊपर से होकर तीन-चार मील का जो कठिन रास्ता गया है, वही काम आता है।

पातालगगा तो सचमुच पाताल मे है। उसकी निचाई के कारण ही यह नाम पडा होगा। गंगा इधर नदी को कहते है। यहां पर्वतो का वक्ष चीरती हुई पातालगगा बहती है। उसे पुल से पार करके आगे बढते है। पुल पर पैर रखते ही दिल दहल

उठता है। पुल कमजोर नहीं है, लेकिन वहां का दृश्य बड़ा डरावना है। पातालगंगा से ऊपर चलते हैं तो ऐसा लगता है मानों स्वर्गारोहण हो रहा हो।

धूप में तेजी आगई। थकान होने लगी। दो मील और चलकर गुलाबकोटी-चट्टी पर रुके। रास्ते में बहुत-से यात्री आते-जाते मिले। बदरीनाथ का मार्ग अपेक्षाकृत सुगम होने के कारण इधर यात्री अधिक आते हैं। रास्ते में संध्यारानी नाम की एक नौ वर्ष की बंगाली बालिका मिली। हाथ में लाठी लिये, धीरे-धीरे, वापस लौट रही थी। पूछने पर मालूम हुआ कि उसने केदारनाथ, त्रिजुगीनारायण, तुंगनाथ और बदरीनाथ की पूरी यात्रा पैदल की है। मैंने उसकी पीठ थपथपाकर शाबाशी दी। देर तक सोचता रहा कि हम लोग बच्चों की शक्ति का ठीक-ठीक अनुमान नहीं कर पाते और अपनी भ्रांत धारणाओं से दुर्बल और भीरु मानकर उन्हें वैसा ही बना भी देते हैं।

गुलाबकोटी की ऊंचाई ५३०० फुट है। चट्टी छोटी-सी थी, मक्खियों की भरमार। यहांपर हमें बदरीनाथ के असिस्टेंट रावल मिले। उनकी हाल ही में नियुक्ति हुई थी और वह सुदूर दक्षिण से पहली बार बदरीनाथ की यात्रा कर रहे थे।

भोजन-विश्राम के बाद पुन: चले। दो मील की चढ़ाई के बाद हेलंग या कुम्हार-चट्टी आई। इस चट्टी से एक मार्ग अलकनंदा के दूसरे किनारे पर दाहिनी ओर कल्पेश्वर—पंचम केदार—को गया है। कल्पेश्वर सघन वन के बीच बड़ा ही मनोरम स्थान है। कल्पेश्वर महादेव के मंदिर के अतिरिक्त वहां एक और मंदिर है।

हेलंग-चट्टी के निकट हेलग नदी है। यहा का रास्ता बड़ा ही कठिन और भयावना है। एक मील और चलकर पैनी-चट्टी पहुंचे। वहां पहुंचते-पहुंचते पैर जवाब दे गये। अत रात वही बिताने का निश्चय किया। छोटी-सी चट्टी थी, पर एकदम सुनसान स्थान होने के कारण बडी शाति थी। अधिकांश यात्री आगे बढ गये थे। हम लोग रात को यही ठहरे। खूब जगह मिल गई। एक दुकानदार ने बढिया पूडिया बना दी। खा-पीकर बातें करते रहे। फिर सो गये। नीद खूब अच्छी आई।

अगले दिन सवा चार बजे रवाना हुए। रास्ता बडा रमणीक था। जरा-सी देर मे आगे निकल गये। खनौटी पहुंचे। वहां से एक मील पर झडकुला, और झडकुला से दो मील पर सिहधार चट्टिया आई। मार्ग इतना सुहावना है कि यात्री का आगे बढ़ने का उत्साह बढता ही जाता है। चढाई अधिक नही है।

इस यात्रा मे फल पीपलकोटी पर देखे थे और अब सिहधार के छोटे-से बाजार मे खूबानी और माल्टा दीख पड़े। पर थे बहुत महगे। खूबानी इधर ही पैदा होती है, पर एक आने की शायद एक या दो। माल्टा सूखा-सा छ' आने का।

: २४ :

शंकराचार्य की साधना-स्थली में

एक मील और चलकर जोशीमठ पहुचे। जोशीमठ ज्योतिर्मठ का अपभ्रंश है। यात्रियो मे इस स्थान की बडी मानता है। बदरीनाथ मदिर की यहा गद्दी है। शीतकाल मे बदरीनाथ के पट बद हो जाने पर, यही से बदरीनाथ की पूजा होती है। यहा वासुदेव, नृसिह और गरुड के मदिर हैं। नभोगंगा और दड-धारा मे यात्री स्नान करते हैं।

हम लोगो ने कालीकमलीवाले की धर्मशाला का पता लगाकर उसमे डेरा जमाया। धर्मशाला के निकट ही एक वाचनालय था। वहा जाकर इतने दिन बाद अखबार पढे। कुछ समाचारों की चर्चा करते हुए स्नान करने कुड पर पहुचे। नहा-धोकर मदिरो मे दर्शन किये। नृसिह की मूर्त्ति का एक हाथ बडा ही कृश है। लोगो की धारणा है कि जब वह हाथ टूटकर गिर जायगा तो नर-नारायण पर्वत आपस मे मिलकर बदरीनाथ का मार्ग अवरुद्ध कर देंगे। पर 'कुमारसहिता' मे उल्लेख है कि जबतक ज्योतिर्मठ मे विष्णु विद्यमान है तबतक बदरीनाथ का मार्ग बद नही होगा, हा जिस दिन विष्णु की ज्योति उठ जायगी, बदरीनाथ मनुष्यो के लिए अगम्य हो जायगा। इसमे सचाई हो या नही, लेकिन इतना मानना पडेगा कि यह स्थान बड़ा आनददायक है। ऊचाई

६१५० फुट है।

राहुलजी ने लिखा है, "जोशीमठ का उल्लेख नवी-दसवीं शताब्दी के कल्यूरी शिलालेखों मे 'जोशिका' (योषिको) के नाम से आया है। बदरीनाथ की बहियों मे गाव का नाम जोशी है। यहां के पुराने निवासी जोशियाल कहलाते हैं। कहा जाता है कि जोशिका कल्यूरियो की राजधानी रही। कल्यूरी राज्य किसी समय सारे कुमाऊं-गढवाल तक ही नही, बल्कि शिमला तक फैला हुआ था।"

जोशीमठ के चारो ओर पर्वतों का परकोटा-सा है। बड़ा सुदर लगता है। इस यात्रा में प्राकृतिक सौदर्य खूब है। कहीं हरियाली अपनी शोभा दिखाती है तो कही नदी अपनी छटा से यात्रियों को मुग्ध करती है, कही पर्वत अपनी विशालता से लोगों को अपनी ओर खीचते हैं तो कही निर्झर अपना कल-कल निनाद सुनाते हैं; कहीं पक्षियो की चहचहाहट कानों में अमृत बरसाती है तो कही फूलों की मुस्कराहट दिल में गुद-गुदी पैदा करती है। निहारे जाओ प्रकृति को, सराहे जाओ उसकी कला को!

जोशीमठ से आधा मील ऊपर ज्योतेश्वर या सिद्धनाथ ज्योतिष्पीठ है। स्वामी शंकराचार्य ने चार दिशाओं मे चार मठ स्थापित किये थे। उनमे से उत्तर का मठ इसी स्थान पर है। हम लोग गेहूं के लहलहाते खेतो के बीच होकर शंकराचार्य के मठ में पहुंचे। ऊचाई पर बड़े ही सुदर स्थान पर वह अवस्थित है। वहीपर आदिगुरु शकराचार्य की गद्दी है। वहा एक साधु मिले। बहुत देर तक उन्होने उपदेश दिया। वह प्रचारक अधिक जान पडे। यहा शंकराचार्य की गद्दी के निकट यात्री किसी-न-किसी व्यसन का त्याग करते है। हमारे साथी घोरपड़ेजी ने सिगरेट

का त्याग कर दिया।

मठ के निकट ही शहतूत का बहुत बडा वृक्ष है। कहते है, यह वृक्ष बडा पुराना है और इसीके नीचे स्वामी शकराचार्य को शक्ति के दर्शन हुए थे। उसके पास हीं देवी शक्ति का मदिर है। जोशीमठ के मदिरो मे कुछ मूर्तिया बडी सुदर थी। नवदुर्गा के मदिर मे नवदुर्गा की मूर्त्तिया है। लोगो ने बताया कि यहा से बहुत-सी मूर्त्तिया गायब होगईं। उनमे एक मूर्त्ति सूर्य की भी थी। कुल मिलाकर अन्य स्थानो की अपेक्षा यहा मूर्त्तिया कम हैं।

यहापर गुलाब खिले हुए मिले। सेब के पेड भी देखे।

ढाई बजे तक दर्शन, भोजन, विश्राम से छुट्टी पाकर फिर आगे बढ चले।

जोशीमठ काफी बडी जगह है। छोटा-मोटा शहर-जैसा समझिये। अच्छा-खासा बडा बाजार है। जूनियर हाईस्कूल, डाक-बगला, अस्पताल, डाकघर, पुलिस-चौकी आदि सभी आधुनिक सुविधाए उपलब्ध हैं।

जोशीमठ से एक रास्ता पूर्व-उत्तर को होकर धौली नदी की घाटी को जाता है। ७ मील पर एक तपोवन है। वहा गरम पानी का कुण्ड है। वहा से १॥ मील पर भविष्य-बदरी का मदिर है। यह स्थान पच-बदरी मे से है। इसी मार्ग से आगे कैलास और मानसरोवर को रास्ता जाता है। जोशीमठ से ४३ मील पर नीती गाव है, जो इस मार्ग पर भारत की सीमा का अतिम गाव है। नीती से कैलास कुल १५८ मील है।

जोशीमठ से आगे उतार था। हम लोग दौडते हुए चलने लगे; लेकिन थोडा चलने पर थक गये। फिर धीरे-धीरे बढे।

यह दो मील का उतार परेशान कर डालता है। विष्णु-प्रयाग पहुचे, जहां अलकनंदा और विष्णुगगा का सगम है। विष्णुगगा को धौलीगंगा भी कहते हैं। यह नीती से आती है। विष्णुगंगा का जल बडा गंदला था। यहा भगवान विष्णु का मदिर है।

आगे का मार्ग अपने ढग का निराला है। दोनो ओर ऊची-ऊंची पर्वत-मालाएं है, जिनपर कही-कही पेड खडे दिखाई देते हैं। सारा दृश्य डरावना लगता है। इतने ऊंचे पर्वतो के बीच नदी का कलकल निनाद और निर्जन पथ पर यात्रियो का आवागमन मन मे विचित्र कल्पनाओं की सृष्टि करते है।

विष्णुगगा मे थोडी देर रुककर आगे बढे। बिना चले यहा तो गति ही नही। एक मील पर बलदौड़ा और उसके आगे ३ मील पर घाट-चट्टी आई।

: २५ :

एक मनोरंजक प्रसंग

घाट-चट्टी पर पहुंचते-पहुचते थक गये। पातालगंगा के उतार ने टागो की वह हालत करदी थी कि कुछ न पूछिये। इसलिए तय किया कि रात को वही डेरा डालें।

विष्णुभाई और मै पहले पहुच गये थे। स्थान की व्यवस्था एक दुकान के ऊपर की। थोडी देर मे टोली के बाकी लोग आगये, सामान भी पहुच गया। कमरा खूब बड़ा था। उसीमे सबने अपने-अपने बिस्तर खोल लिये।

पूड़िया खाते-खाते तग आगये थे। सो खिचडी की व्यवस्था की गई। तबतक जिन लोगो को निबटने जाना था, वे अलकनंदा के किनारे चले गये। लौटकर सबने भोजन किया। भोजन के बाद प्रार्थना करने को इकट्ठे होनेवाले थे कि एकदम चिरजीलालजी चिल्लाये, "भाईजी, भाईजी!"

उनकी आवाज मे घबराहट थी। मैं पास ही था। मैंने पूछा, "क्या बात है?"

"यह देखो, यह देखो", उन्होने अपने कुरते की जेब के नीचे के हिस्से की ओर इशारा करके कहा। लालटेन की धुधली रोशनी मे मैंने देखा कि वहा कुछ काला-काला है। उधर के लोगो ने बताया था कि इस चट्टी पर साप-बिच्छू अक्सर मिल जाते हैं। अत. अनुमान हुआ कि वह बिच्छू है। चिरजीलालजी भी यही समझ रहे थे। काला-काला देखकर यह भी अदाज हुआ कि बिच्छू बड़ा

जहरीला होगा।

अब क्या हो ? बिच्छू को पकडने के लिए कुछ था नही। हम सब थोडी देर तक चुपचाप सोचते रहे कि क्या करे। चिरंजीलालजी बहुत हैरान तो नही हो रहे थे, फिर भी बिच्छू बिच्छू ही था और उसका डर स्वाभाविक था।

इस सबमें एक-दो मिनट निकल गये होंगे। मैने देखा कि बिच्छू अपने स्थान पर स्थिर बैठा था। इधर-उधर जरा भी हरकत नही कर रहा था। मैने हिम्मत करके कुरते का एक हिस्सा पकड़ा और धीरे-से बिच्छू को झटक दिया। वह नीचे आ पडा। लेकिन यह क्या ? अब भी उसने कोई हरकत न की। तब मैने लालटेन को नजदीक लाकर देखा। देखकर ऐसे जोर की हँसी आई कि सब मेरी ओर देखने लगे। वह बिच्छू नही था, काले धागे में बंधी उनकी चाबी थी। जेब से कुछ निकालने मे वह बाहर गिर पड़ी थी। अब तो हँसी के मारे सब लोटपोट होगये। चिरंजीलालजी की परेशानी अबतक दूर हो चुकी थी। इस मनोरजन में उन्होने भी खूब हिस्सा लिया। थकान दूर हो गई।

बातचीत करते हुए सो गये। रातभर लालटेन जलती रही।

आधी रातगये अचानक शोभालालजी उठे। खटपट हुई तो हम लोगो की आख खुल गई। पूछने पर उन्होने बताया कि उन्हे ऐसी आवाज-सी आई है, जैसे किसी साप ने चूहे या मेढ़क को दबोच लिया हो। जिधर से आवाज आई थी, लालटेन लेकर उधर देखा, पर कुछ भी न मिला। जैसे-तैसे वह रात कटी।

बदरीनाथ अब केवल १३ मील है। एक दिन का रास्ता रह गया है।

: २६ :

'चरैवेति चरैवेति'

सवेरे जल्दी ही घाट-चट्टी से रवाना हुए। धूप तेज होने से पहले यात्रा आनद से हो जाती है। अतः हम लोगो का बराबर प्रयत्न रहता कि सूर्य देवता के उग्र होने से पहले ही जितना चल सके, अच्छा है। २॥ मील चलकर पाडुकेश्वर पहुचे। बीच मे एक रास्ता अलकनंदा के झूले को पार करके सिखो के तीर्थ-स्थान हेमकुड तथा 'पुष्पो की घाटी' को जाता है। हेमकुड की ऊचाई १४,२०० फुट है। लोगो कहना है, वहा पूर्व-जन्म मे गुरु गोविंदसिंह ने तपस्या की थी। फूलो की घाटी 'पुष्पो का स्वर्ग' कहलाती है। कुछ लोग उसे 'नंदन-कानन' भी कहते हैं। मौसम मे सैकडो किस्म के फूल वहापर खिले रहते है। ऊचाई लगभग १६,७०० फुट है। उस स्थान का अतर्राष्ट्रीय महत्व है।

पाडुकेश्वर ६००० फुट की ऊचाई पर है। बस्ती काफी बड़ी है। डाक-बगला, धर्मशाला, डाकघर और बाजार होने के कारण प्राय यात्री वही रात्रि-वास करते हैं। धार्मिक दृष्टि से भी उस जगह का बडा महत्व है। वासुदेव तथा योगध्यानि का मदिर है। यह भी पंचबदरी मे से एक है। पाडवो ने इसे बनवाया था। प्राचीन कथा है कि महाराजा पाडु ने पूर्व-जन्म मे मृग-रूपी मुनि को बाण से मारकर उनके शाप से दुखी होकर यहा तपस्या

की थी। यह भी कहा जाता है कि यहीपर कुती ने पाचो पाडवों को जन्म दिया था और यहीपर महाराज पांडु की मृत्यु हुई। यहा-पर दो ताम्र-पत्र है, लेकिन उन्हे अभी तक कोई पढ नही सका।

विष्णु-प्रयाग से यहातक की भूमि बड़ी शस्य श्यामला है। खूब हरियाली है। रास्ता बड़ा शोभायुक्त है। अलकनदा बड़ी तेजी से बहती है। रास्ते के दोनो ओर ऊचे-ऊंचे वृक्ष और लताए है। पुष्पो की महक से यात्रियो का हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। प्रकृति की माया समझ में नही आती है। जहा उदार होती है, वहा निहाल कर देती है। जहा क्रुद्ध होती है, वहां क्या मजाल कि हरियाली के नाम पर एक पत्ती भी दिखाई दे जाय। पर उसके सभी रूप बडे प्यारे लगते है—वैचित्र्य के कारण।

ढाई मील पर लामबगड़-चट्टी आई। यहा देवदार के जगल है। लामबगड़ से ३ मील पर हनुमान-चट्टी। हनुमान-चट्टी की ऊचाई ८,००० फुट है। वहापर घृतगगा और अलकनदा का सगम है। कहते है, पूर्वकाल में यहा वैखानस मुनि का आश्रम था और महाराज मरुत ने यहा एक बहुत बडा यज्ञ किया था। बदरीनाथ के मार्ग मे यही अंतिम पडाव है। आगे ५ मील तक चढाई-ही-चढाई है।

हम लोग ६।। बजे के करीब हनुमान-चट्टी पहुचे। सोचा कि वहा दोपहर को विश्राम करेंगे और शाम को चलकर बदरीनाथ पहुंचेगे, लेकिन इतना धीरज अब कैसे हो सकता था। एक दूकान पर झटपट खाना खाया और जबतक सामान पहुचे कि सोटा-झोला उठाकर चल दिये। बहुत-से यात्री आ-जा रहे थे। जरा-जरा-सी देर मे 'जय बदरीविशाल' का स्वर गूज उठता था।

लेकिन लौटनेवाले यात्रियो के चेहरो पर थकान दीखती थी। फिर भी हम उनसे पूछते थे कि क्यो भाई, अब कितनी दूर है बदरीनाथ? चढाई बहुत मुश्किल है क्या? जगह कैसी है? आदि-आदि। प्रत्येक यात्री हमारे उत्साह को वढाता था।

ज्यो-ज्यो ऊपर चढते जाते हैं, सर्दी बढती जाती है और धूप सुहावनी लगती है। अब बर्फ खूब मिलने लगी। अलकनदा की धारा कई जगह जमी हुई थी। कही-कही बर्फ टूट गई थी और नीचे बहती धारा बडी मोहक लगती थी। थोडा और आगे बढने पर हिम-मडित पर्वत मिलने लगे। केदारनाथ की अपेक्षा इधर झरने अधिक है। पहाडो के बीच मे से निकलकर बहते हुए श्वेत प्रपात ऐसे लगते हैं, जैसे दूध की धारा बह रही हो। सर्दी के कारण बहुत-से झरने जम जाते हैं। लगता है किसीने कलई से मोटी-पतली लकीरें खीचकर पर्वत पर चित्रकारी करदीहो। कई स्थानो पर बर्फ पर होकर चलना पडता है। कितनी ही बार बर्फ पर चल चुके है, लेकिन जैसे ही बर्फ आती है, उसे तोडकर लड्डू बनाने को हाथ लालायित हो उठते हैं। सर्दी है तो क्या! हाथ ठिठुरते है तो ठिठुरें! सहज ही आनद जो आता है! बचपन एक बार फिर लौट आता है।

इधर के रहनेवालो का स्वास्थ्य बडा अच्छा है। रग साफ और चेहरे लाल। स्त्रिया गहने खूब पहनती है, पर गदगी बहुत है। शायद बरसो मे ये लोग स्नान करते हैं। यहा दिखावा नही है और स्त्रियो मे गजब का शील है। आप चुपचाप चित्र खीच ले तो अलग बात है, मालूम होने पर शायद ही कोई स्त्री चित्र खिचवाने को राजी हो।

ज्यों-ज्यों मंजिल पूरी होती जा रही थी, मन एक अनिर्वचनीय आनंद से उल्लसित हो रहा था। पैर कितने थक रहे थे, पर कठ एक-एक क्षण मे मुखरित हो उठते थे, 'जय बदरी विशाल !'

हनुमान-चट्टी से तीन मील पर कांचनगगा आई। ऊपर से नीचे तक सारी धारा जमी हुई थी। बर्फ पक्की और चिकनी। अनभ्यस्त होने के कारण बहुत-से यात्री फिसल पड़ते है, पर सौभाग्य से ढाल ऐसा नही है कि नीचे पाताल-दर्शन हो जाय, या जोर की चोट लग जाय। मजे की बात यह है कि गिरनेवाले रोते नही, खिलखिलाते हैं और साथ के लोगो के मनोरजन का तो कहना ही क्या ! ऐसी सजीवता अन्यत्र दुर्लभ होती है। जहा प्रकृति हंसती हो, मानव का रोना शोभास्पद कैसे हो सकता है ?

: २७ :

पुरी में प्रवेश

काचनगगा से चलकर देवदर्शनी पहुचे। वहा से वदरीनाथ पुरी दीखने लगती है। ओह! प्रथम दर्शन से कितना आनन्द हुआ! कितने दिन की यात्रा के वाद यहा पहुचे हैं? चारो ओर पहाड-ही-पहाड है। उनकी तलहटी मे किस शान से अलकनदा वह रही है!

दो वजे थे उस समय। देवदर्शनी से जरा आगे निकले कि जोर का तूफान आया। चारो ओर धूल छागई। हम लोगो ने भागकर एक विश्रामालय मे शरण ली। थोडी देर मे प्रकृति का प्रकोप कम हुआ तो वाहर आये। सर्दी खूब पडने लगी थी। पुरी की ओर बढे। पुरी के इधर-उधर दो पर्वत प्रहरी की भाति खडे थे, मानो नगर की रक्षा कर रहे हो। हमारे एक साथी ने बताया कि वे ही नर और नारायण पर्वत है।

अलकनदा का पुल पार करके वस्ती के निकट पहुचे तो हृदय गद्गद् होगया। ऋषिगगा और अलकनदा का यहा सगम है। ऋषिगगा ऊचाई से आती है। इसलिए खूब शोर मचाती है। अलकनदा वडी ही शात और धीर-गभीर है।

ऋषिगगा के पुल पर खडे होकर यात्री एक वार सवकुछ भूल जाता है। जिधर निगाह जाती है उधर ही अटक जाती है।

केदारनाथ की भाति यहां भी पर्वत वृक्षहीन है। फिर भी उनकी अपनी शान है, गरिमा है। आश्चर्य होता है सारे दृश्यो को देखकर। उससे भी अधिक विस्मय होता है यह सोचकर कि किस दूरदर्शी व्यक्ति ने सर्व-प्रथम इस स्थान की खोज की होगी और कौन होगा वह बड़भागी, जिसने इस स्थान को भारत का ही नही, दुनियाभर के आकर्षण का केंद्र बना दिया? हजारों स्त्री, पुरुष और वच्चे जाने कहा-कहां से खिचकर यहा आते है और ऐसा अनुभव करते हैं, मानो उनके जीवन की साध पूरी हो गई। जरा उनके चेहरे की श्रद्धा-भक्ति के दर्शन कर लीजिये'। आपका हृदय पुलकित हो उठेगा।

वदरीनाथ की वस्ती अच्छी खासी है। उपनगर-सा लगता है वह। पक्के मकान दूर-दूर तक फैले हुए है। वाजार मे होकर हम लोग मदिर-कमेटी के मत्री श्री पुरुषोत्तम वगवाड़ी के यहां गये। उससे पहले हिंदी के पत्रकार श्री गोविंदप्रसाद नौटियाल अपनी पुस्तकों की दूकान पर मिल गये। घोरपडेजी का उनसे पत्र-व्यवहार चल रहा था। नौटियालजी ने अपना आदमी हम लोगो के साथ कर दिया। इससे बगवाडीजी का मकान आसानी से मिल गया।

वगवाडीजी घर पर ही थे। उन्हे सूचना थी कि हम लोग एक दिन वाद पहुंचेंगे। इसलिए मंदिर-कमेटी के गैस्ट-हाऊस के हमारे लिए सुरक्षित दो कमरो मे से एक मे उन्होने एक व्यक्ति को ठहरा दिया था। वह कुछ अजमंजस मे पड़े, पर हमने उनसे कहा कि आप चिता न करे, हम एक रात एक ही कमरे में काट लेगे, अगले दिन तो दूसरा कमरा खाली हो ही जायगा। वह हमें

साथ लेकर गैस्ट-हाउस पहुचे। वहा देखते क्या हैं कि हमारे मित्र तथा पत्रकार श्री विश्वभरसहाय 'प्रेमी' अपनी पत्नी और पुत्री के साथ वहा विराजमान हैं और हमारेवाला कमरा उन्हीको दे दिया गया है। वह तो घर के ही आदमी थे। परदेश मे अपने आदमी के मिल जाने से कितनी प्रसन्नता होती है!

: २८ :

बदरीनाथ में तीन रात

हम लोगो की शेष टोली लगभग पाच बजे तक पहुंची। बोझी उसके घटेभर बाद आये। हमे मालूम हुआ कि पास मे ही गरम पानी का कुड है। सामान आ जाने पर कुण्ड मे खूब स्नान किया। कपडे बदलकर शाम को आरती मे शामिल होने मदिर मे गये।

उस समय वहा वडी भीड थी। स्थान की तंगी के कारण थोडे ही लोग एक द्वार से अदर जाते थे और कुछ देर दर्शन करके दूसरे दरवाजे से वाहर चले जाते थे। इस प्रकार यात्रियो का आना-जाना बराबर बना रहा। रावल-महोदय ने आरती के अनतर वडी सावधानी से मूर्त्तियो पर से एक-एक करके सारे अलंकारादि उतारे और शयन-आरती करके पट बद कर दिये। रावल तथा उनके सहयोगियो को छोड़कर कोई भी व्यक्ति मंदिर के गर्भ-गृह मे नही जा सकता। हमे गर्भ-गृह के निकट ही विठा दिया गया। वहा से हम अदर की सव चीजे अच्छी तरह देख सकते थे। एक बहन तो इतनी भक्ति-विह्वल होगई कि खडताल लेकर वार-बार मदिर की परिक्रमा करती। उन्हे देखकर मीरा का स्मरण हो आया। मंदिर मे दर्शन करते समय उन बहन की आंखो से आसुओं की धारा वह रही थी।

अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुसार लोग चढावा चढा रहे थे। कोई रुपया-पैसा चढाता तो कोई चने की दाल, आदि। वग-वाडीजी ने बताया कि सन् १९५३ मे ८० हजार यात्री आये थे और इस बार भी हमारे पहुचने तक १६,००० यात्री वदना कर चुके थे।.

आरती के साथ-साथ, बल्कि उससे कुछ पहले से, मदिर के बाहर एक बराडे मे कीर्तन आरंभ हो जाता है। श्री पर्वती-कर नाम के महाराष्ट्र के एक साधु वहा तीन वर्ष से रहते हैं। रुद्रवीणा गजब की बजाते हैं। मौन रहते हैं और केवल कीर्त्तन मे वीणा बजाते हुए भक्ति के बोल वोलते है। कीर्त्तन के स्वरो से वह निर्जन वनस्थली प्रतिदिन सध्या को मुखरित हो उठती है। कीर्त्तन मे लीन साधुओ की भाव-भगिमा तथा यात्रियो की भाव-विह्वलता देखते ही बनती है।

बदरीनाथ पुरी बडी विस्तृत है। लबा-चौडा बाजार है, जिसमे खाने-पीने की चीजो के अतिरिक्त कपडे, किताबें, फोटो का सामान, तावे की मूर्तिया, मालाए आदि दर्जनो चीजें मिल जाती है। शिलाजीत, सुरमा आदि की भी कई दूकानें हैं। विजली होने से बस्ती की शोभा और भी वढ गई है।

दिनभर के थके थे। आरती के बाद बाजार मे एक चक्कर लगाकर अपने निवास-स्थान पर लौट आये और थोडी देर मे सो गये। वदरीनाथ मे तीन रात बिताने का माहात्म्य है। उसके अतिरिक्त स्थान इतना भव्य है कि वहा कई दिन रहने को जी करता है। हमने निश्चय किया कि तीन रात वहा रहेगे।

चलने की जल्दी नही थी, फिर भी इतने दिनो की पडी

आदत के अनुसार अगले दिन सबेरे जल्दी ही आख खुल गई। उठकर निवृत्त हुए, तप्तकुड मे स्नान किया। तत्पश्चात् मंदिर मे गये। मदिर छोटा-सा है, दाक्षिणात्य शैली का। मदिर में प्रवेश करने के लिए विशाल और कलापूर्ण सिह-द्वार है। अदर घुसते ही दाये-बाये कुछ कमरे है, जिनमे से दाईं ओर पर्वतीकरजी रहते हैं और बाईं ओर के कमरो मे अखड कीर्त्तन होता है।

प्रवेश-द्वार के सामने मदिर के प्रांगण मे गरुड़ की मूर्ति है। बाईं ओर नर-नारायण और नारद तथा दाहिनी ओर उद्धव और गणेशजी के दर्शन होते है। एक ओर लक्ष्मीजी का मदिर है, जिसके समीप ही भोग-प्रसाद बनाने का भंडार है। यही भगवान का भोग बनता है। इस भोग मे छुआछात का भेदभाव नहीं किया जाता।

मदिर के भीतर बदरीविशाल की काले पत्थर की पद्मासनस्थ चतुर्भुजी मूर्त्ति है। उसके सबध में लोगो की अलग-अलग धारणाएं है। वैष्णव उसे विष्णु भगवान की मूर्त्ति मानते है, शैव शिव की, शाक्त शक्ति की, जैन पार्श्वनाथ अथवा ऋषभदेव की, बौद्ध वुद्ध की, आदि-आदि, और सब अपनी-अपनी दृष्टि से अपनी-अपनी मूर्त्ति की छवि उसमे देख लेते है। प्रतिमा की दो भुजाए तो पद्मासन की मुद्रा मे है। दो ऊपर की ओर जाती हैं। कंधे से ऊपर का भाग नही है। वहा सपाट पत्थर है। चंदन की बाड़ लगाकर दर्शको को सिर का अनुमान करा दिया जाता है। बाहें खडित है। वक्ष पर श्रीवत्स का चिह्न है।

इस मूर्त्ति के इधर-उधर और भी कई छोटी-बड़ी मूर्त्तियां हैं, जिनमें लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्त्तिया प्रमुख हैं। मंदिर की

किवाडो पर चादी का खोल चढा है। उसपर एक ओर जय की मूर्त्ति वनी है, दूसरी ओर विजय की। वदरीविशाल की मूर्त्ति की वडी मान्यता है। सभी धर्मों और मत-मतातरो के लोग यहा आते हैं और उसके दर्शन करते है।

मदिर के वाहर साधु और भिखारियो की भीड इकट्ठी हो जाती है। वडे ही करुण स्वर मे वे यात्रियो से भीख की याचना करते हैं। वड़ा वुरा लगता है। तीर्थ-क्षेत्रो मे लोगो की दान-पुण्य-की वृत्ति ने इन लोगो को भिखमगा वना दिया है।

वस्ती १०,२४३ फुट की ऊचाई पर वसी है। उसके पश्चिम मे नीलकठ की हिमाच्छादित चोटी है। वह 'मध्य हिमालय की महारानी' के नाम से प्रसिद्ध है। उसकी ऊचाई २१,६४० फुट है, लेकिन कोई भी यात्री अवतक उसपर चढने मे सफल नही हो सका। नीलकठ के अतिरिक्त और भी कई दर्शनीय स्थान हैं। तप्तकुड की चर्चा ऊपर आ चुकी है। वह अलकनंदा के तट पर है। 'वह्नितीर्थ' कहलाता है। उसके निकट ही अत्यत शीतल जल की 'कूर्मधारा' है। नीचे वडी-वडी शिलाओ के वीच 'नारदकुड' है। पास मे 'ब्रह्मकुड', 'गौरीकुड' तथा 'सूर्यकुड' गर्म जल के कुड हैं। वदरीनाथ पुरी के अतर्गत पच-तीर्थ हैं—१ ऋषिगगा, २ कूर्मधारा, ३. प्रह्लादधारा, ४ तप्तकुड और ५ नारदकुड। इसी प्रकार पच-शिलाए भी हैं—१ नारद-शिला, २ वाराह-शिला, ३ नरसिंह-शिला, ४ गरुड़-शिला और ५ मार्कण्डेय-शिला।

मदिर से कुछ दूर पर 'ब्रह्मकपाल' है, जहा पितरो को पिंड और तर्पण दिये जाते हैं।

इस स्थान का नाम वदरिकाश्रम है। किसी जमाने मे यह

बदरी (बेर) के पेड़ बहुत रहे होगे। नारद मुनि ने यहां तप किया था, अतः इस पुरी को नारद-क्षेत्र भी कहते है। कुछ लोग बदरीपुरी तथा विशालपुरी भी कहते हैं। बदरीविशाल की मूर्त्ति पौराणिक काल की मूर्त्ति बताई जाती है। कहते है, नारद इसे पूजते थे। बौद्धकाल मे उस मूर्त्ति को बौद्धो ने अलकनदा मे डाल दिया। सातवी या आठवी शताब्दी मे भगवान की प्रेरणा से आदिगुरु शकराचार्य दक्षिण भारत से वहां आये और उन्होने उस मूर्त्ति का नारद-कुड से उद्धार करके उसे तप्तकुड के पास गरुड़-कोटि नाम की गुफा मे प्रतिष्ठित कर दिया। चूकि मूर्ति का उद्धार और प्रतिष्ठा दक्षिण के एक मनीषी के द्वारा हुई, इसलिए नियम होगया है कि बदरीनाथ की पूजा दक्षिण के नाम्बूद्री ब्राह्मणों के ही हाथो से होती रहेगी।

वर्तमान मदिर का निर्माण गढवाल-नरेश ने विक्रम की पंद्रहवी शताब्दी मे कराया था। मंदिर के ऊपर सोने का कलश है, जिसे इंदौर की रानी अहिल्याबाई ने चढाया था।

स्थान बहुत ही मनोरम है। चारों ओर बर्फ से ढंके हुए पर्वत है, जिनके बीच बसी हुई पुरी ऐसी लगती है, मानो किसी कलाविद ने विभिन्न रंगो से कोई चित्र बना दिया हो। प्रकृति की छटा को देखकर जी नही भरता। बाल-सूर्य की किरणे जब इस महान तपोवन के धवल शिखरों पर पडती है तो सहज ही विश्वास नही होता कि हम कोई वास्तविक दृश्य देख रहे हैं। सारा वायुमडल स्वर्णिम हो उठता है। कहते है, एक बार इतने जोर का हिमपात हुआ कि पुरानी नगरी ध्वस्त होगई। नई का निर्माण हुआ। पुरानी के अवशेष आज भी वर्तमान पुरी के निकट

दिखाई देते हैं।

अन्य दर्शनीय स्थानो मे लगभग दो मील पर बदरीनाथ की माता मूर्त्तिदेवी का मदिर है, जहा वामन-द्वादशी को हर साल मेला लगता है। दूसरा स्थान सतोपथ है, जो १४,४०० फुट की ऊचाई पर है। वहापर बर्फ के पानी का एक बडा ही अच्छा सरोवर है—२ फर्लांग लबा और १३०० फुट चौडा। यह बदरीनाथ से लगभग १४ मील की दूरी पर है। वहा जाते समय रास्ते मे लक्ष्मीपुरी के पास अलकापुरी मिलती है, जहा आदिगगा अलकनदा का उद्गम है। दो मील पर अलकनदा के बाये तट पर माणा नामक ग्राम है, जिसकी ऊचाई १०,५६० फुट है। यह भारत और तिब्बत की सीमा का अतिम ग्राम है।

शाम को फिर वही कीर्तन और आरती। सबसे हृदयस्पर्शी दृश्य यात्रियो की भक्ति-भावना से उपस्थित होता है।

: २९ :

रोचक कहानी

राहुलजी ने अपनी पुस्तक 'हिमालय-परिचय' (भाग १) में बगवाड़ीजी के चपरासी गगासिह दुरियाल से सुनकर बदरीनाथ की एक बडी ही रोचक कहानी दी है। पाठको के मनोरंजन के लिए उसे देने का लोभ सवरण करना मुश्किल है। यह कहानी परपरा से वहां चली आती है और लोगो मे खूब प्रचलित है।

पहले बदरीनाथ सतलज के किनारे थोलिङ् नामक मठ में रहते थे। लामा लोग उनकी पूजा करते थे। वे मासाहारी थे। यह बात बदरीनाथ को बुरी लगती थी। वह तो शुद्ध आचारवाले थे। एक दिन जबकि लामा लोग दरवाजे बद करके सो रहे थे, बदरीनाथ ने मंदिर के दरवाजे के ऊपर दीवार मे छेद किया और निकल भागे। कहते है, थोलिङ् मठ मे वह छेद आज भी मौजूद है।

बदरीनाथ बहुत दूर नही निकल पाये थे कि लामा लोगों को पता लग गया और उन्होने उनका पीछा किया। बदरीनाथ ने उन्हे देखा तो झट छोटा रूप धरकर एक चौरी गाय की पूछ में छिप गये। लामा लोगो ने उन्हें इधर-उधर बहुतेरा खोजा, लेकिन उनका अता-पता न मिला। चौरी गाय के इस उपकार

से अभिभूत होकर बदरीनाथ ने वरदान दिया कि आज से चौंरी गाय की पूछ पवित्र मानी जायगी। तभी से उसकी पूछ के चवर बनाये जाते हैं और वे इतने पवित्र समझे जाने लगे कि देवताओ के ऊपर ढुलाये जाते है।

लामा लोगो के निराश होकर चले जाने पर बदरीनाथ फिर अपना असली रूप धरकर आगे बढे। लेकिन कुछ दूर जाने पर देखते क्या हैं कि लामा लोग फिर उनके पीछे चले आ रहे हैं। तब उन्होने रास्ते मे आग की एक बड़ी लबी पक्ति खडी कर दी, पर लामा लोग उससे भी न रुके। आग के मारे उनकी दाड़ी-मूछें जल गईं। कहा जाता कि इसी कारण से आज भी लामा लोगो के दाडी-मूछें नही के बराबर होती हैं।

लामा लोग उनका पीछा करते ही गये। संयोग से बदरीनाथ के श्यामकर्ण घोडा हाथ आ गया। उसपर चढकर वह तेजी से भागे। लामा पिछड गये। माणा गाव के पास आकर बदरीनाथ ने घोडा छोड दिया। आज भी माणा गाव के पास चट्टान के रूप मे उसकी स्मृति सुरक्षित है। माणा से बदरीनाथ कुल २॥ मील हैं।

उस समय शिव और पार्वती इस भूमि के स्वामी थे। उनका मदिर तप्तकुण्ड के ऊपर कही था। आस-पास खेत थे, जिनमे बढिया चावल होता था।

इस सुदर भूमि को देखकर बदरीनाथ का मन ललचा गया, पर वह तो शिव-पार्वती की सपत्ति थी और बलपूर्वक छीनी नही जा सकती थी। इसलिए उन्होने एक चाल चली। पुरी के पास ही बावणी नामक दुरियालो का गाव है। हाल के पैदा हुए एक बच्चे का रूप धारण करके बदरीनाथ वहा रोने लगे।

शिव-पार्वती प्रातःकाल घूमने निकले थे। सुनसान मे बच्चे का रोना सुनकर पार्वती का हृदय विचलित होगया। शिवजी के रोकते-रोकते उन्होने बच्चे को गोद मे उठा लिया। घर लाकर उन्होने उसे मदिर मे रखा और स्वयं शिवजी के साथ तप्त-कुण्ड मे स्नान करने चली गईं। स्नान करके लौटी तो देखती क्या है कि मदिर के किवाड़ भीतर से बंद है। उन्होने बहुतेरा द्वार खटखटाया, आवाज दी, पर द्वार न खुला। शिवजी ने कहा, "देखा, मैंने कहा था कि धोखा खाओगी, पर तुम न मानी।"

पार्वती ने गुस्से मे भरकर कहा, "ठीक है। मै इस तप्त-कुंड मे बर्फ गिराकर उसे ठडा कर दूगी, जिससे इस शैतान को नहाने के लिए गर्म पानी न मिले।"

शिवजी ने कहा, "यह भी तुमने खूब सोचा! इससे इसको उतनी हानि नही पहुंचेगी, जितनी यात्रियो को। वे बेचारे जाड़े मे ठिठुरकर मर जायगे।"

पार्वती ने शिवजी की बात मान ली, पर बदला लेने की भावना उनमे इतनी प्रबल थी कि उन्होने शाप दिया कि आगे से इस भूमि मे चावल की खेती नही होगी।

इसके बाद दोनों ने अपना घर छोड़कर नीचे का रास्ता लिया। जरा नीचे आकर जब वे काचनगंगा को पार कर रहे थे तो देखते क्या हैं कि लोग पीठ पर लादकर कुछ लिये जा रहे हैं। पार्वती के पूछने पर उन्होंने बताया कि भगवान के लिए वे बासमती चावल ले जा रहे हैं।

पार्वती बड़ी दुखित हुई। बोली, "मेरा शाप व्यर्थ गया। यहां तो और भी बढिया चावल आ रहा है।"

उधर बदरीनाथ अब मौज से रहने लगे। बढिया भोग लगता, शृगार के लिए रत्नजडित आभूषण आते, लोग आकर केसर, कस्तूरी तथा अन्य बहुमूल्य वस्तुए चढाते।

कुछ समय वाद बदरीनाथ के माता-पिता को पता लगा कि उनका लडका चैन की बसी बजा रहा है तो उन्होने सोचा कि चलो, बुढापे मे हम भी आराम से बेटे के पास रहे। यह सोच उस बुढापे मे दूर की मजिल तय करके वे दोनो लडके के घर आये। लेकिन बदरीनाथ तो अब बदल गये थे। उनकी पत्नी लक्ष्मी उनके पास आ गई थी। उन्होने सोचा कि मा-बाप सामने रहेगे तो आजादी मे बाधा पडेगी। इसलिए बदरीनाथ ने पिता को तो पाच मील दूर वसुधारा के प्रपात पर भेज दिया। मा को माणा के सामने माता-मूर्त्ति बनाकर बिठा दिया।

: ३० :

पौराणिक कथा

पुराणों मे बदरीनाथ की और ही कथा मिलती है। कहते है, सृष्टि का निर्माण करनेवाले ब्रह्मा के बहुत-से लड़के थे, जिनमे एक का नाम दक्षथा। दक्ष के सोलह लड़किया थी। उनमे से तेरह का विवाह धर्मराज के साथ हुआ। उनमे एक का नाम था श्रीमूर्त्ति या मातामूर्त्ति। उसके पेट से दो पुत्र उत्पन्न हुए। एक का नाम था नर, दूसरे का नारायण। दोनों भाइयो मे बड़ा प्रेम था। वे कभी एक-दूसरे से पृथक नही होते थे। नर छोटे थे, नारायण बड़े। वे दोनों अपनी मा को बहुत चाहते थे और उनकी खूब सेवा करते थे। उनकी सेवा से प्रसन्न होकर एक दिन मां ने उनसे कहा, "बेटा, तुम दोनो की सेवा से मै बहुत प्रसन्न हू। तुम जो चाहो मागो। मै तुम्हे वही दे दूगी।"

दोनो भाई बड़े ऊचे विचारो के थे। उन्होने कहा, "हम दोनो वन मे जाकर तप करना चाहते हैं। तुम कुछ देना ही चाहती हो तो यही वरदान दो कि हम दोनो भाई सदा तपस्या करते रहे।"

मां वचन-बद्ध थी। उसे बेटो के बिछुडने की बात से दुख हुआ, पर अब क्या हो सकता था। उसने वर दे दिया।

मा का आशीर्वाद लेकर दोनो भाई हिमालय मे पहुचे और एक जगह बदरी (बेर) का वन देखकर वही रम गये। कद-मूल-फल वहा थे। गगा का तट था। झरने थे। चारो ओर बर्फ थी।

इस स्थान पर दोनो भाइयो ने कठोर तप किया। इनकी तपस्या को देखकर देवलोक के राजा इद्र घबरा उठे। उन्हें डर लगा कि कही अपनी तपस्या के बल पर वे उसका इद्रासन न छीन ले। अत. दोनो का तप भग करने के लिए इद्र ने मेनका आदि अप्सराओ को भेजा। उन्होने बहुतेरा प्रयत्न किया, लेकिन वे उनको तप से न डिगा सकी। सालो बीत गये। एक दिन नारायण ने आखें खोली। सबको देखा। अप्सराए भयभीत हो उठी। नारायण ने उन्हे आश्वासन दिया कि वे वहा रहे, उनकी कोई हानि न होगी।

इसके बाद, कहते हैं, उन्होने आम की एक डाली लेकर अपनी जाघ मथी और उसमें से बहुत-सी अप्सराए निकल पडी। उन्हे देखकर देवलोक की अप्सराए अपना सौंदर्य भूल गई। नारायण की पैदा की हुई अप्सराओ मे एक थी उर्वशी। उसके नाम पर बदरी-वन मे आज भी उर्वशी-कुण्ड बना हुआ है। नारायण ने उर्वशी को देवलोक की अप्सराओ को दिया और कहा, "इसे अपने राजा इद्र को हमारी ओर से दे देना।"

उर्वशी की सुदरता को देखकर वे अप्सराए लज्जित हो उठी। वे उसे लेकर इद्र के पास आई। इद्र ने जब उर्वशी के रूप को देखा तो वह आश्चर्य-चकित रह गये। उन्हें स्मरण हुआ कि वे दोनो भाई साधारण प्राणी नही है, भगवान के अवतार हैं।

दोनो भाई कलियुग तक वही तपस्या करते रहे। कलियुग आने

का समय हुआ तो नारायण कृष्ण के और नर अर्जुन के रूप में प्रकट हुए। ऋषि-मुनियो ने उनसे प्रार्थना की कि आप बदरी-वन में निवास करे और एक ही रूप मे अवतार ले। इसपर भगवान ने उनसे कहा, "हे मुनियो, अब कलिकाल आनेवाला है। उसमे मेरा साक्षात दर्शन होना असभव है। कलि-काल के कल्मष को मिटाने के लिए नारदकुड मे मेरी मूर्त्ति है। उसका उद्धार करो और यहा एक मदिर बनवाकर मूर्त्ति को उसीमें प्रतिष्ठित कर दो।"

ऋषि-मुनियो ने यही किया। द्वापर मे उन्होने मूर्त्ति को कुड मे से निकाला और नारायण मुनि के कहने के अनुसार देवताओ के प्रधान शिल्पकार विश्वकर्मा से एक मदिर बनवाकर उसमे प्रतिष्ठित करा दिया। नारद इसके पुजारी नियुक्त हुए।

कहते है, जब असुर यज्ञ करने को हुए तो भगवान ने उन्हें हराने के लिए बुद्ध का अवतार लिया। बौद्धो ने बदरी-नारायण की प्रतिमा को बुद्ध की समझकर उनकी पूजा प्रारभ करदी।

यह भी कहा जाता है कि ८वी शताब्दी मे कैलासवासी शकर के अवतार शकराचार्य ने जन्म लिया और बौद्धो को पराजित करके वहा से भगा दिया। जब वे भागे तो बदरीनारायण की मूर्त्ति को उठाकर नारद-कुंड मे पटक गये।

शकराचार्य ने जब देखा कि मूर्त्ति मदिर मे नही है तो ध्यानावस्थित होकर पता लगाया कि वह नारद-कुंड में पडी है। वहा से उन्होने उसका उद्धार करके पुनः स्थापित कर दिया।

: ३१ :

रोमांचकारी अनुभव

बदरीनाथपुरी मे जो देखना था, देख चुके तो निश्चय किया कि वसुधारा हो आना चाहिए। एक दिन प्रातःकाल ७।। बजे हमारी टोली बदरीनाथ से वसुधारा के लिए रवाना हुई। चलने से महले लोगो ने कहा कि वहा का रास्ता बडा कठिन है और प्रपात मे जल अधिक न होने के कारण वहा का दृश्य विशेष आकर्षक नही है, फिर भी वसुधारा की इतनी प्रशसा सुन चुके थे कि वहा जाये बिना मन को सतोष नही हो सकता था। वैसे भी वहा की बडी मानता है। जो लोग बदरीनाथ आते हैं, वे वसुधारा जरूर जाते हैं।

दस मील का आना-जाना था। दो बजे से पहले नही लौट सकते थे। इसलिए साथ में कुछ पूड़ियां और साग ले लिया। अलकनदा के किनारे-किनारे आगे बढे। चारो ओर धवल शिखर बडे सुहावने लग रहे थे। खेतों में भोटा-स्त्रिया काम कर रही थी।

दो मील पर माणा गाव आया। बस्तीबडी छोटी-सीहै, कुछ ही घर है, पर वहा की प्राकृतिक छटा बडी भव्य है। अलकनदा को पुल से पार करके गाव मे प्रवेश करते हैं। पुल इतना हिलता है कि अगर कोई कच्चे दिल का यात्री हो तो घबरा जाय। पुल

दिल्ली से प्रस्थान

लक्ष्मणझूला
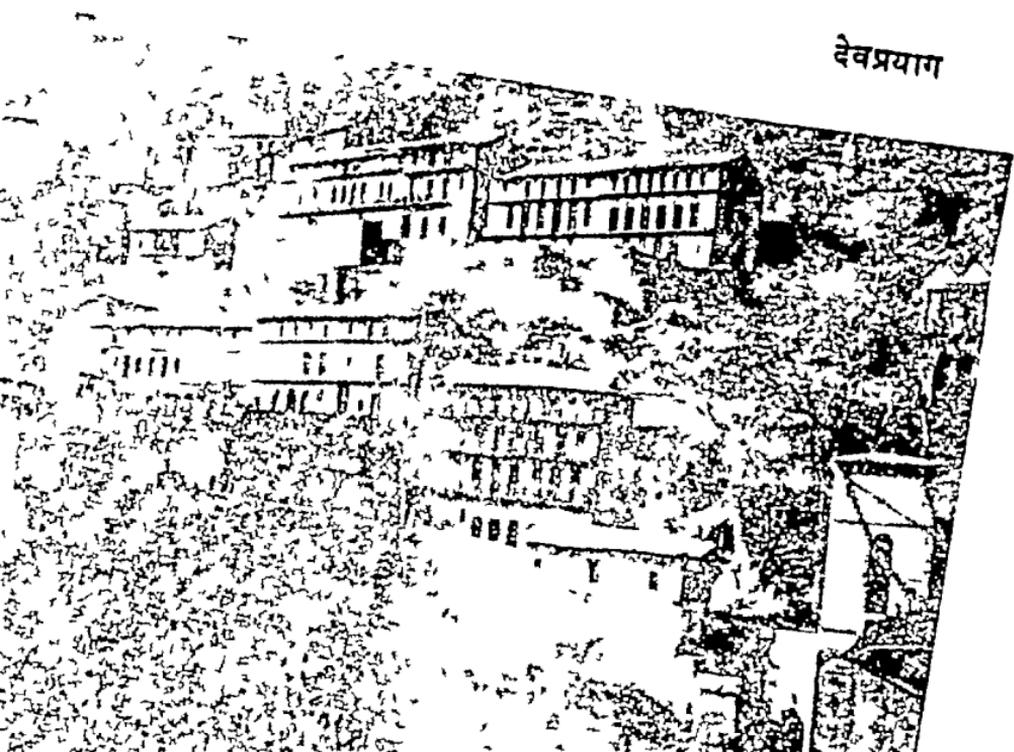
देवप्रयाग

पैदल-यात्रा का प्रारंभ

गुप्तकाशी

गौरीकुंड

जय केदारनाथ

त्रिजुगीनारायण

तुगनाथ का मंदिर

तुंगनाथ के दो सुंदर दृश्य

ऊबड़-खाबड़ मार्ग

डरावने पुल

जय बदरीनाथ
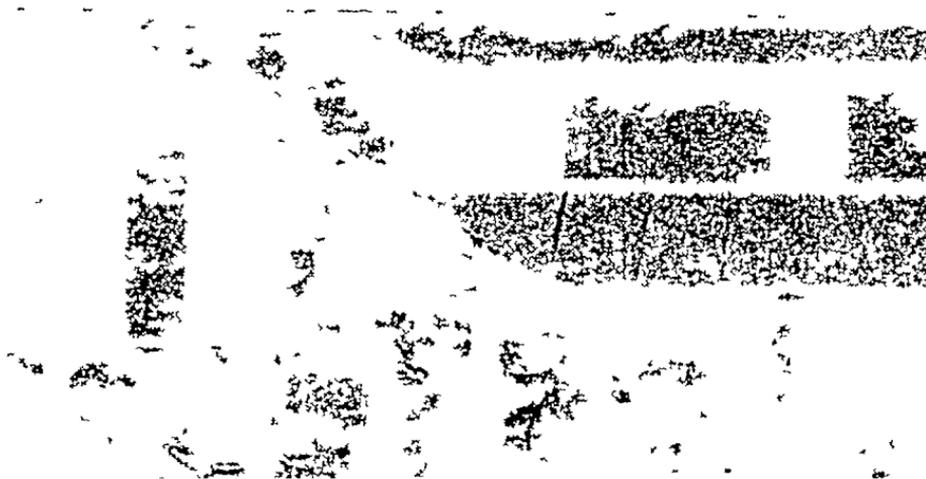
वसुधारा

से जरा आगे सरस्वती और अलकनदा का संगम है, जिसे 'केशव प्रयाग' कहते है। माणा मे एक उद्योग-केद्र है, जहा कुछ स्त्री-पुरुप बुनाई का काम कर रहे थे। मालूम हुआ कि उद्योग-धंधों को प्रोत्साहन देने के लिए कुछ सरकारी और सार्वजनिक उद्योग-केद्र इस पार्वत्य प्रदेश मे कई स्थानो पर खोले गये हैं।

गाव से कुछ गज पर भीम-शिला आई, जिसपर होकर सरस्वती नदी को पार किया। यह शिला भी प्रकृति का एक अद्भुत चमत्कार है। स्वत ही एक विशाल शिला के दोनो छोर नदी के दोनो किनारों पर टिक गये है और वह प्राकृतिक पुल का काम देती है। नीचे नदी की धारा बड़ी तेजी से बहती है।

शिला पर चले तब तो कुछ नही लगा, पर जब उधर खडे होकर देखा तो उस आधार-शिला ने सारे शरीर को रोमांचित कर दिया। भीमशिला के निकट ही 'गणेश-गुफा' और 'व्यास गुफा' है। कहते है, भगवान व्यास ने इसी व्यास-गुफा मे श्रीमद्-भागवत की रचना की थी।

आगे का मार्ग बडा कठिन था और कुछ ऊबड-खाबड़ भी। अलकनदा बर्फ से जमी हुई थी। जिधर देखो उधर ही बर्फ। लगभग एक मील और आगे बढने पर इस रास्ते मे पहली बार वर्फ पार की। बार-बार पैर फिसलते थे। बडी सावधानी से पैर जमाकर और लाठी टिकाकर उसपर से गुजरे। काफी फासला था। पार करते-करते जूतो के तले भीग गये। मोज़ों तक पानी पहुंच गया। पैर ठिठुरने लगे। ऊंचाई अधिक होने के कारण ठड भी बढ गई।

सामने एक हिममडित पर्वत था, जिसका शिखर तिकोना

था। बर्फ के कारण वह ऐसा जान पडता था, मानो किसीने चादी का मुकुट पहना दिया हो। उसके ऊपर कुछ बादल अठखेलिया कर रहे थे। उस दृश्य की भव्यता आज भी नही भूलती। अलकनंदा की धारा सहमकर बर्फ के नीचे छिप गई थी, पर उसके स्वरूप की झाकी दिखाने के लिए दो-एक झरने पर्वत के वक्ष से फूट रहे थे।

जैसे-तैसे ग्यारह बजे के लगभग वसुधारा पहुचे। अब हम १२,५०० फुट पर थे। ४०० फुट की ऊचाई से दो धाराए गिर रही थी और नीचे बर्फ का एक विशाल पर्वत था। प्रपात के निकट ही एक गुफा-सी दिखाई देती थी।

विष्णुभाई ने बताया कि यहा के बारे मे एक दत-कथा है कि जिस व्यक्ति पर इस झरने की बूद नही पडती, वह वर्ण-सकर-सेतान होता है। सुनकर हम बडी हँसी आई।

अपना सामान नीचे छोडकर हम बर्फ के पहाड पर चढने चले। जहा बर्फ कच्ची थी वहा हमारे पैर घसते थे और लाठी हाथ-हाथभर नीचे चली जाती थी। जहा बर्फ कडी थी, वहा पैर फिसलते थे। एक बार तो ऐसा लगा कि ऊपर पहुंचना कठिन होगा, लेकिन हिम्मत करके चढते ही चले गये। चार साथी पहले ही घुटने टेक गये। थोडा चढकर वे लौट गये। ऊपर एक ओर को जमीन थी। बर्फ पार कर वहा खडे हो गये। लेकिन हम लोगो को तो ठेठ धारा तक पहुचना था। फिर साहस किया। लाठी को अच्छी तरह बर्फ मे गाड लेते थे, उसके सहारे कुछ कदम आगे बढते थे, फिर लाठी को खीचकर दूसरी जगह जमाते थे। बार-बार लगता था कि अब फिसले, अब फिसले। फिसलने का मतलब होता था सैकडो गज नीचे पहुच जाना। भगवान का नाम लेकर

आखिर हम चार जने धारा के निकट पहुंच ही गये। वहां देखते क्या हैं कि पहाड के सहारे पानी गिरने के कारण लगभग गजभर चौड़ी खाई-सी है। यदि कोई उसमें गिर जाय तो पता भी न चले।

ऊपर पहुंचकर हम लोग नीचे के साथियों का ध्यान आकर्षित करने के लिए लगे शोर मचाने। इतने में हवा का झोंका आया और पानी की धारा हम लोगो के ऊपर आ गिरी। सारे कपड़े भीग गये। सर्दी के मारे पहले ही से काप रहे थे। उधर जूते-मोजे भीग जाने के कारण पैर कटे जा रहे थे। अब आ पड़ा ऊपर से पानी ! पानी मे सराबोर हो जाने के कारण कुछ घबराहट सी होने लगी। हे भगवान, अच्छी तरह नीचे उतर जायं ! दो साथी मुझसे पहले उतरने लगे, उनके पीछे मै, फिर एक और साथी। कुछ गज उतर चुके तो अचानक देखता क्या हूं कि आखिरी साथी ऊपर से लुढके, ठीक मेरी सीध मे। लगा कि अपनी लपेट मे वह मुझे भी लेगे और हम दोनो बिना प्रयत्न के नीचे पाताल मे पहुंच जायगे। एकदम सारा शरीर काप गया। अब ? पर घबराने का अवसर न था। तत्काल मैने अपनेको संभाला और लाठी को जोर से बर्फ मे जमाकर साथी का स्वागत करने के लिए तैयार हो गया। जैसे ही वह निकट आये, मैने उनकी टांग पकड ली। वह रुके और रुकने के साथ ही उन्होने बर्फ मे हाथ गाड दिये। इससे संभल गये। दुर्घटना होते-होते बच गई।

नीचे आकर खूब हंसे। वसुधारा न गये होते तो इस रोमांचकारी अनुभव से वचित रह जाते।

लौटते मे रास्ता उतना भारी नही पडा। २॥-३ बजे के लगभग बदरीनाथ पहुचे।

: ३२ :

पुण्यधाम में अंतिम दिन

वसुधारा आने-जाने मे काफी थकान हो गई थी, लेकिन सुदर दृश्यो का स्मरणकर मन पुलकित हो रहा था। डेरे पर पहुच-कर कुछ देर विश्राम करके रावलमहोदय से मिलने गये। मदिर के अहाते मे मथुरा की एक मडली रास दिखा रही थी। रावलजी आदि वही थे। यात्रियो की भीड़ का तो कहना ही क्या था! बहुत देर तक रासलीला देखते रहे। खूब रस आया। बीच-बीच मे स्त्रिया उठ-उठकर कृष्ण पर चढावा चढाती थी। उससे रास मे बाधा पडती थी, लेकिन इस भक्ति-भावना को रोका भी कैसे जा सकता था?

शाम को आरती मे सम्मिलित हुए, तत्पश्चात् रावलजी के साथ उनके निवास पर गये। वह केरल के नम्बूद्री ब्राह्मण थे, बडे भले और मिलनसार स्वभाव के। हमे बड़े प्रेम से बिठाया और पूजा के वस्त्र उतारकर हम लोगो के बीच बैठ-कर बाते करने लगे। लगभग घटेभर उनसे चर्चा होती रही। उनसे जब हमने मूर्त्ति के विषय मे पूछा तो उन्होने बताया कि यह कहना बडा कठिन है कि वह किसकी है। सभी धर्मवाले उसे अपनी-अपनी मानते हैं, लेकिन उन्होने कहा कि इसमे सदेह नहीं कि मूर्त्ति की महिमा निराली है। सभी मान्यताओवाले

यात्री वहा आते है और उस मूर्त्ति के प्रति इतनी श्रद्धा और भक्ति प्रकट करते है कि देखकर हृदय गद्‌गद्‌ हो जाता है। रावलमहोदय ने यह भी बताया कि छः महीने जबतक वहां पूजा होती है, वे बदरीनाथ रहते है, अनतर दक्षिण चले जाते है।[1]

उस पुण्यधाम मे वह अतिम दिन था। अगले दिन तो सवेरे चल ही देना था। इसलिए खूब घूमे, यात्रियो की उमडती हुई भक्ति-भावना के दर्शन किये और वहा के प्राकृतिक सौंदर्य को अच्छी तरह से देखा। वह स्थान इतना भव्य है, इतना रमणीक कि वहा से हटने को जी नही करता था।

केदारनाथ की अपेक्षा यहा का मौसम अधिक सुहावना है। केदारनाथ मे सर्दी के मारे दात कटकटाते थे और एक रात काटना मुश्किल होगया था। यहा वह बात नही थी। सर्दी तंग करनेवाली नही थी, बल्कि बाहर घूमने मे आनंद आता था। तीन दिन ऐसे निकल गये कि मालूम भी न पडे। रोज़ सवेरे तप्तकुड मे खूब स्नान करते थे। भोजन का काम मदिर की ओर से प्राप्त होनेवाले प्रसाद से चल जाता था। दिनभर का पूरा समय घूमने मे जाता था। शाम को पर्वतीकरजी तथा अन्य साधु कीर्त्तन कराते थे। आरती होती थी।

हमारी बडी इच्छा थी कि कुछ साधुओं के दर्शन करे और उनके साथ धर्म-चर्चा का लाभ ले, लेकिन बहुत प्रयत्न करने पर

---

1. खेद है कि इन युवक रावल महोदय का चेचक से वाराणसी में देहांत होगया।

भी किसी योग्य साधु के दर्शन न हुए। लोगों से पूछने पर मालूम हुआ कि अच्छे साधु तो गगोत्री-यमुनोत्री के मार्ग मे मिलते हैं।

यात्रियो का यहा ताता लगा रहता है। भारत के ही नही, विदेशो के लोग भी यहा आते-जाते रहते है।

चढावा खूब चढता है। सबेरे की पूजा के बाद अपराह्न मे मदिर के अहाते मे सारा चढावा एकत्र करके रुपये-पैसे गिने जाते है। ढेर लग जाता है। आखिर लोग इतनी लबी-लबी यात्राए काफी खर्च करके आते है तो चढावा भी दिल खोलकर चढ़ाते हैं। यह सब आय मदिर के काम आती है।

रात को १०-११ बजे तक बस्ती में चहल-पहल रहती है। अनतर सारी नगरी शात हो जाती है। एकात चिंतन के लिए वह समय सर्वोत्तम होता है। नदी के तटवर्त्ती किसी घाट पर जा बैठिये और अपनी कल्पना को निरकुश छोड दीजिये। बडा आनद आयगा।

इस यात्रा मे सबसे अधिक समय बदरीनाथ मे ही ठहरे। फिर भी तृप्ति नही हुई। जी करता था, दो-एक दिन और ठहर जायं तो अच्छा है।

: ३३ :

वापसी

तीन रात व्यतीत करने के बाद तय हुआ कि अगले दिन आठ बजे वहा से कूच कर किया जाय। सवेरे खूब जल्दी आख खुल गई। हाथ-मुह धोकर तप्तकुड मे स्नान किया, मदिर गये, सामान सभाला और ७॥ बजे चलने को तैयार होगये। बग-वाडीजी को धन्यवाद दिया तो वह कहने लगे कि इस शिष्टाचार की आवश्यकता नही है। अगली बार फिर आइये।

हरिजन-उद्योग-शाला, दिल्ली की जो टोली दर्शन के लिए आई थी· उसमे कई भाई परिचित थे। यहा आने पर लोगो मे उत्सुकता हुई कि देखे, अधिकारी लोग हरिजन भाइयो को मंदिर मे जाने देते है या नही। लेकिन कोई बात न हुई। सबने बड़ी अच्छी तरह से दर्शन किये, मदिर के प्रागण मे कीर्तन किया। बगवाडीजी की इस दूरदर्शिता को देखकर बडी प्रसन्नता हुई। हरिजन-छात्रो मे से कुछ जल्दी ही लौट गये थे, कुछ हम लोगों के साथ के लिए रह गये।

आखिर उस पुण्यधाम से विदा लेने की घड़ी आई। वहां के वायुमंडल मे इतनी स्निग्धता थी कि छोड़ने को जी नही होता था। अलकनंदा का कलकल-निनाद और पर्वत के धवल शिखर बार-बार अपनी ओर खीचते थे। नीलकंठ के उत्तुग शृंग ने

जैसे हमारे पैरो मे जंजीर डाल दी थी। हम लोग दो कदम आगे बढते थे, फिर रुक जाते थे और पीछे मुडकर उस निर्जन प्रदेश मे पर्वतो की गोद मे बसी पुरी की शोभा को निहारते थे। देव-दर्शनी पर तो हम लोग बहुत देर तक खडे रहे। बीसियो यात्री आ-जा रहे थे और 'बदरीविशाल' के जय-घोष से वहा का वायु-मडल निरतर मुखरित हो रहा था। देर होते देखकर हम लोगो ने प्रकृति को प्रणाम किया, पुरी को श्रद्धाजलि अर्पित की और आगे बढ चले।

चले तो ऐसे चले कि बीस मील चलकर पौने सात बजे शाम को सिहधार पर जाकर रुके। बीच मे लामबगड पर मुश्किल से घटेभर के लिए भोजन करने को यात्रा स्थगित की। मार्ग परिचित था और उतराई थी। फिर भी विष्णु-प्रयाग के बाद की दो मील की चढाई ने प्राण ले लिये। सबसे पहले विष्णुभाई वहा पहुचे, उनके आने के कोई आधा घटे बाद, यानी ७-७॥ पर शोभालालजी और मैं। देखते क्या है कि विष्णुभाई एक मकान के नीचे चबूतरे पर बैठे हैं। मैने पूछा, "क्यो, जगह की व्यवस्था नही हुई ?"

वह बोले, "चट्टी का यह मकान अच्छा है, पर इसका आदमी ऊटपटाग बात करता है।"

हम लोग ऊपर गये। मकान-मालिक भी आ गया। वह कहता था कि मै इस बडे कमरे को पूरा नही दे सकता। बगल की कोठरी मे कोई दूसरी टोली ठहरी थी, जिसने बडे कमरे मे चूल्हा जला रखा था।

मैने मकान-मालिक से पूछा, "कितनी जगह दोगे ?"

उसने इशारा करके बताया—आधे कमरे से भी कम। मै उससे पहले ही कह चुका था कि हमारी टोली बडी है। उसकी बात पर मुझे झुझलाहट हो आई। मैने कहा, "भाईमेरे, यह बताओ कि तुम सोने को जगह देना चाहते हो या बैठने को या खडे होने को ? हमलोग पूरा कमरा लेंगे। और किसीको नही आने देगे।"

मेरी बात पर उसकी आवाज भी तीखी हो उठी। व्यग्य से बोला, "तुम्हे इतना ही आराम चाहिए था तो अपना मकान साथ लेकर चलते !"

मैंने कहा, "कुछ भी कहलो, मकान साथ ला सके होते तो तुम्हारी इतनी बात क्यो सुननी पड़ती !"

उस कमरे मे और भी यात्री आ गये थे। भले थे। उन्हे ज्यों-ही मालूम हुआ कि हमारी टोली बडी है और उसमे कुछ महिलाए भी है तो वे स्वय ही दूसरी जगह चले गये और हमे एक कोने को छोडकर करीब-करीब सारा कमरा मिल गया।

इस कहा-सुनी का मन पर बडा खराब असर पडा। अब-तक की यात्रा मजे मे होगई थी। आखिरी समय पर तेज बात बोलने से क्या लाभ था ! यह सब सोचकर और इस डर से कि कही आगे और कोई तीखी बात मुह से न निकल जाय, मैंने सबेरे चार बजे तक के लिए मौन धारण कर लिया।

टोली के शेष लोग कोई १० बजे पहुंचे। आते ही भाभी ने कुछ कहा तो मै चुप रहा। उन्होने कहा—बोलते क्यो नही ? मैने एक पर्चे पर लिखकर उन्हे सारी बात बतादी। उन्होने मौन तोड़ने के लिए बहुत आग्रह किया, पर मुझे चुप रहना ही ठीक लगा।

सारी टोली थककर चूर होगई थी। सब अनुभव करते थे कि एक दिन मे इतने मील चलना बुद्धिमानी की बात नही हुई। कुछ लोग तो इतने थक गये कि बिस्तर फैलाकर लेटे तो लेटे ही रहे। खाना भी नही खाया। दूध पीकर सो गये।

इतनी थकान के बाद अच्छी नीद कहा आनी थी!

: ३४ :

आखिरी अनुभव

सब दिन की तरह सबेरे जल्दी उठे और तैयार होकर पौने पाच बजे आगे की यात्रा पर चल पडे। टोली की राय हुई कि पिछले दिन जो भूल की, वह अब नही होनी चाहिए। शेष यात्रा आराम के साथ करनी चाहिए।

कुछ घटे सबेरे और थोडा-सा शाम को चलकर टगणी-चट्टी पहुंचे। पहले से ही तय कर लिया गया था कि रात वही बिताई जायगी। पिछले दिनो की भाति टोली के कुछ लोग पहले पहुच गये, जिनमे विष्णुभाई, शोभालालजी तथा मै थे। एक मकान के ऊपर कमरे मे ठहरने की व्यवस्था करके हम लोग थकान मिटाने के लिए दीवार के सहारे पैर ऊचे करके लेट गये। टोली के बाकी लोग काफी देर मे पहुचे। लेकिन उनमे शोभालालजी की पत्नी तथा उनकी पडौसिन माताजी नही थी। वे इतनी पीछे तो नही थी कि सब आजाते और वे रह जाती! हम लोग नीचे आये, यात्रियो तथा दुकानदारो से पूछताछ की, पर कुछ भी पता न चला। चिंता होने लगी। कही कोई दुर्घटना न होगई हो! पर जो यात्री सबसे बाद मे पहुचे थे, उन्होने वैसी कोई बात नही बताई। थोड़ी और प्रतीक्षा की। नही आईं तो सोचा कि हो-न-हो, वे दोनो आगे निकल गईं। सामान आ चका था, शोभालालजी

ने एक बोझी पर अपना और उन दोनो का सामान रखवाया और यह सोचकर कि वे अगली चट्टी पर मिल जायगी, एक टट्टू पर सवार होकर वहा से रवाना होगये। हम सबको बडा बुरा लगा। पर कर भी क्या सकते थे!

चट्टीवाला बडा भलामानस था। उसकी दुकान पर मेवा थी। खरीदकर खाई। पूडी-साग भी उसने अच्छा बना दिया और बडे प्यार से खिलाया।

स्थान बडा रमणीक था, भीडभाड भी अधिक नही थी। फिर भी काकी और माताजी की चिंता के मारे रातभर हैरानी रही।

सबेरे जल्दी ही रवाना होने के विचार से कोई ४ बजे उठ बैठे। तैयार होकर चट्टीवाले का हिसाब करने लगे तो उसने कहा, "पूडियो के चार रुपये सेर के हिसाब से लूगा।"

हम लोगो ने कहा, "भाई, इतने दाम तो अबतक कही भी नही लगे। ज्यादा-से-ज्यादा तुम साढे तीन के हिसाब से ले लो।"

हममे से सबने उसे समझाने की कोशिश की, पर वह कहा माननेवाला था! आखिर मार्तण्डजी से न रहा गया। उन्होने कहा, "अच्छी बात है। यह लो चार रुपये के हिसाब से। लो, करलो अपना भला।"

रुपये दे दिये गये, पर इतनी बातचीत से दुकानदार सहम गया। बोला, "अच्छी बात है। साढे तीन ही लगा लीजिये।"

पर अब हम लोगो का आग्रह था कि नही, हम चार ही देंगे। बडी विचित्र-सी स्थिति उत्पन्न हो गई। दोनो ही अपनी-अपनी बात पर अडे थे। आखिर दुकानदार ने साढे तीन का हिसाब लगा-

कर बाकी के पैसे सामने रख दिये। हम लोगो ने सोचा कि समय बरबाद करने मे दुकानदार का तो कुछ बिगड़ेगा नही, उल्टे हम लोगो को देर हो जायगी, सो पैसे उठाकर चुपचाप जेब के हवाले किये और आगे चल दिये।

अंतिम चट्टी आई गरुडगगा। वहा पहुचकर सबसे पहले काकी और माताजी को तलाश किया। वे कालीकमलीवाले की धर्म-शाला मे मिल गईं। शोभालालजी भी उनके साथ थे। पूछने पर मालूम हुआ कि टगणी-चट्टी पर काकी ने हम लोगो को तलाश किया था, एक जगह खडे होकर आवाजे भी दी, लेकिन जब न मिले तो यह सोचकर कि हम आगे निकल गये हैं, वे भी आगे बढ गई।

गरुड़गगा पर स्नान करने का बड़ा माहात्म्य है। जाते समय जल्दी मे हम लोगो ने स्नान नही किया था। इसलिए सब-की राय हुई कि कुछ देर होजाय तो कोई बात नही, स्नान करके ही चलना चाहिए। स्नान किया, नाश्ता किया और ताजे होकर चले तो ८ बजे पीपलकोटी पहुच गये।

: ३५ :

यात्रा की समाप्ति

पीपलकोटी मे आकर देखते क्या हैं कि यात्रियो की बेशुमार भीड है। सैकडो यात्री दो-दो, तीन-तीन दिन से पडे थे। माथा ठनका कि कही हमे भी बस मे जगह न मिले और कई दिन वहा पड़ा न रहना पडे। लेकिन चूकि बदरीनाथ से ही हम लोगो ने बस के अधिकारियो को बस मे जगह सुरक्षित करने के लिए तार दे दिया था, इसलिए एकदम निराशा नही थी। सीधे बस के दफ्तर मे जाकर बात की तो मालूम हुआ कि हमारा तार पहुंच गया था और अधिकारियो ने आश्वासन दिया कि हमें जल्दी-से-जल्दी स्थान देने का प्रयत्न करेंगे।

सामान आने के बाद उसे सभाला। बोझियो से विदा ली। इतने दिन साथ रहने के कारण कई बोझियो की हम लोगो से बडी आत्मीयता होगई थी। अलग होने पर उनका और हम लोगो का जी भर आया। जल्दी-जल्दी भोजन किया। ११ बजे की बस मिली। चमोली, नदप्रयाग, कर्णप्रयाग और रुद्रप्रयाग होकर ७३ मील का रास्ता तय करके शाम को पाच बजे श्रीनगर पहुचे। रास्ते मे ड्राइवर ने बताया कि गाडी के ब्रेक काम नही करते हैं। बडी झुंझलाहट हुई। ऐसे विकट मार्ग मे ब्रेको का न होना अपनी और यात्रियो की जान को खतरे मे डालना

है। पर संतोष की बात यह थी कि ड्राइवर बडा कुशल था। वर्षा होते हुए भी उसने कही कोई दुर्घटना न होने दी।

श्रीनगर पर तत्काल बस मिल गई। ६॥ बजे कीर्तिनगर पहुंचे। वहा भीड इतनी थी कि ठहरने के लिए स्थान पाने मे बड़ी कठिनाई हुई। जैसे-तैसे बहुत थोडी जगह मिली, उसीमे रात काटी। सवेरे सामान उठाने के लिए नये बोझी ढूढने पडे। वहां स्त्रिया भी बोझा उठाती है और बड़ी मुस्तैदी के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर सामान पहुचा देती है।

अगले दिन पांच बजे सबेरे बस से रवाना हुए। ऋषीकेश ६४ मील है। रास्ते की विकटता को देखते हुए अनुमान था कि १० बजे तक वहा पहुच जायगे, लेकिन अचानक रास्ते मे बस खराब हो जाने से एक घटे की देरी हो गई। ११ बजे जाकर वहां लगे। बस तैयार खड़ी थी। बैठकर हरिद्वार पहुचे। विष्णुभाई और घोरपड़ेजी को दिल्ली लौटने की जल्दी थी। वे उसी दिन लौट गये। हमलोग उस दिन रुके। अच्छी तरह से गगा-स्नान किया और रातभर विश्राम करके अगले दिन अपराह्न की बस से रवाना होकर रात को दिल्ली आ गये।

कुल मिलाकर २०० मील पैदल चले और २७० मील बस मे। दिल्ली से हरिद्वार और हरिद्वार से दिल्ली तक का सफर अलग। २१ दिन मे यात्रा पूरी हुई।

इस प्रकार बड़े आनद से यात्रा हुई। उसकी याद आज भी मन मे गुदगुदी पैदा करती है। शहर के कोलाहल-भरे जीवन से ऊबकर जी बार-बार उस अलौकिक प्रदेश मे पहुंच जाता है, जहां पर्वत अपना सिर ऊंचा किये खड़े है, पुण्य-सलिला सरिताएं

अखड गति से प्रवाहित होती हैं, हरे-भरे वृक्ष शीतल छाया प्रदान करते हैं, प्रपातो का कलकल-निनाद कानो मे अमृत-वर्षा करता है, हिम के दर्शन से हृदय धन्य होता है और प्रकृति माता के सतत् स्पर्श से शीतलता अनुभव होती है।

परिशिष्ट

१. मोटर का मार्ग

हरिद्वार से ऋषिकेश	१५ मील
ऋषिकेश से देवप्रयाग	४२ मील
देवप्रयाग से कीर्तिनगर	२१ मील
कीर्तिनगर से श्रीनगर	३ मील
श्रीनगर से रुद्रप्रयाग	२२ मील
रुद्रप्रयाग से कर्णप्रयाग	२१ मील
कर्णप्रयाग से नदप्रयाग	१३ मील
रुद्रप्रयाग से अगस्त्य-मुनि	११ मील[1]
चमोली से पीपलकोटी	१० मील
पीपलकोटी से हरिद्वार	१४८ मील
पीपलकोटी से कोटद्वार	१७६ मील

२. पैदल-यात्रा का मार्ग

अगस्त्य-मुनि से केदारनाथ	३७ मील
केदारनाथ से त्रिजुगीनारायण	१६ मील
केदारनाथ से तुगनाथ	४० मील
केदारनाथ से चमोली	५६ मील
पीपलकोटी से वदरीनाथ	३८ मील
वदरीनाथ से केदारनाथ	१०४ मील

[1]. अब बस चलने लगी है।

३. चट्टियां तथा अन्य जानकारी

१ रुद्रप्रयाग से केदारनाथ

स्थान	समुद्रतट से ऊंचाई फुटों में	मील	डाक, तारघर टेलीफोन	अस्पताल	औषधालय	डाक-बंगला
रुद्रप्रयाग	२०००	—	डा० ता०	है	है	है
छतोली	—	५	—	—	—	—
मठ (तिलवाडा)	—	१	—	—	—	—
रामपुर	—	१	—	—	—	—
मौरगढ	२३००	२	—	—	है	है
अगस्त्य-मुनि	३०००	२	टा०	है	—	है
सौडी	—	२	डा०	—	—	—
चन्द्रापुरी	—	२	डा०	है	—	—
भीरी	३०००.	२॥	डा०	है	—	—
कुंड	—	२	—	—	—	—

गुप्तकाशी	४२५०	२॥	डा० ता० टे०	है	—	—
नाला-चट्टी	—	१॥	—	—	—	—
नारायण कोटी	—	२	—	—	—	—
व्यूगमल्ला	—	१	—	—	—	—
व्यूगतल्ला	—	१	—	—	—	—
मैखंडा	—	२	—	—	—	—
फाटा	५०५०	२	डा०	—	है	है
रामपुर	—	३	—	—	—	—
सोमद्वारा	—	३॥	—	—	—	—
गौरीकुंड	६५००	३	—	—	—	है
रामवाडा	—	४	—	—	—	—
केदारनाथपुरी	११५५३	३	डा०ता०टे०	है	है	है

२ केदारनाथ से बदरीनाथ

स्थान	समुद्रतट से ऊचाई फुटों में	मील	डाक, तारघर टेलीफोन	अस्पताल	औषधालय	डाक-बगला
केदारनाथ	११५५३	०	डा०ता०टे०	है	है	है
रामवाडा	—	३	—	—	—	—
गौरीकुण्ड	६५००	४	—	—	—	है
त्रिजुगीनारायण	७८००	५॥	—	—	—	—
रामपुर }	—	३	—	—	—	—
नाला }		पुराना मार्ग				
ऊखीमठ	४३००	३	डा०	है	है	है
कथा	—	२॥	—	—	—	—
ग्वालियावगड	—	२	—	—	—	—
दैढा	—	१॥	—	—	—	—
पोथीवासा	—	३	—	—	—	—
दोगलभीटा	७७००	२	—	—	—	है
वाणियाकुड	—	१	—	—	—	—

चौपता	—	१	—	—	—	—
तुगनाथ	१२०७२	३	—	—	—	—
भीमद्वार	—	३	—	—	—	—
पागरवासा	—	३	—	—	—	—
मडलचट्टी	—	४	डा० ता०	—	—	है
वैरागना	—	१	—	—	—	—
गोपेश्वर	—	४	—	—	—	—
चमोली (लाले सागा)	३५००	३	डा० ता०	है	है	है
मठ	—	१।	—	—	—	—
छिनका	—	१।	—	—	—	—
सियासेण	—	२	—	—	—	—
हाट	—	३	—	है	—	—
पीपलकोटी	४३५०	३	डा० ता० टे०	—	है	है
गरुडगगा	—	४	—	—	—	—
टगणी	—	२	—	—	—	—
पातालगगा	—	२	—	—	—	—
गुलाबकोटी	५३००	२॥	—	—	—	है
हेलग (कुम्हार)	—	२॥	—	—	—	—
पैनी	—	१	—	—	—	—
खनौटी	—	१	—	—	—	—
झडकुला	—	१	—	—	—	—
सिंहधार	—	२	—	—	—	—

स्थान	समुद्रतट से ऊंचाई फुटों में	मील	डाक, तारघर, टेलीफोन	अस्पताल	औषधालय	डाक-बंगला
जोशीमठ (ज्योतिर्मठ)	६१५०	१	डा० ता०	है	है	है
विष्णुप्रयाग	—	२	—	—	—	—
वलदौडा	—	१	—	—	—	—
घाट	—	३	—	—	—	—
पाडुकेश्वर	६४५०	२	डा०	—	—	है
विनायक	—	१	—	—	—	—
लामवगड	—	३	—	—	—	—
हनुमान-चट्टी	—	२	—	—	—	—
वदरीनाथपुरी	१०२४४	५	डा० ता० टे०	है	है	है

३ बदरीनाथ से बसुधारा

स्थान	समुद्र से ऊचाई (फुटो मे)	मील
बदरीनाथ	१०,२४४	—
माणागाव	१०,५६०	२
वसुधारा	१२,०००	३

४. बदरीनाथ से माता-मूर्ति

बदरीनाथ	१०,२४४	—
मातामूर्ति	—	२।

५ बदरीनाथ से चरण-पादुका

बदरीनाथ	१०,२४४	—
चरण-पादुका	—	२

६. बदरीनाथ से शेषनेत्र

बदरीनाथ	१०,२४४	—
शेपनेत्र	—	१

७. बदरीनाथ से सतोपंथ और विष्णुकुड

बदरीनाथ	१०,२४४	—
मातामूर्ति	—	२
चमतोली	—	३॥
लक्ष्मीवन	—	२
सौधारा	—	२॥
चक्रतीर्थ	—	३
सतोपथ	—	२॥
सोनकुड	१४,४००	१॥
विष्णुकुड	—	।।।